महाराजा अग्रसेन

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन

83, मॉडल बस्ती, ईस्ट पार्क रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली-110005
फोन : 23633333, 23510630, फैक्स : 23550630

अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन - एक परिचय

स्थापना : 5-6 अप्रैल, 1975

संस्थापक पदाधिकारी

अध्यक्ष : श्री किशन मोदी, नीमका थाना, सीकर

वरिष्ठ उपाध्यक्ष : श्री बद्रीप्रसाद अग्रवाल, जबलपुर

महामंत्री : श्री रामेश्वरदास गुप्ता, दिल्ली

कोषाध्यक्ष : स्व. ब्रजलाल चौधरी, चेन्नई

मंत्री : स्व. हरिकिशन अग्रवाल, नागपुर

उपलब्धियाँ :

6 सितम्बर, 1975 को विधान की स्वीकृति। 4-5 मई, 1976 इंदौर में अग्रोहा विकास ट्रस्ट की स्थापना तथा विधान की स्वीकृति। 24 सितम्बर, 1976 को महाराजा अग्रसेन पर डाक टिकट, 29 सितम्बर, 1976 को अग्रोहा में भूमि पूजन एवं निर्माण कार्य का प्रारंभ। 1998 में आ. स्वराज्यमणि अग्रवाल द्वारा रचित शोध ग्रंथ ''अग्रसेन-अग्रोहा-अग्रवाल'' अग्रवाल समाज का प्रामाणिक इतिहास तैयार किया गया।

अधिवेशन : आगरा, दिल्ली, अलवर, हैदराबाद, वाराणसी, कलकत्ता, रोहतक मुम्बई, शिवपुरा, अहमदाबाद, इंदौर, मुरैना, कुरुक्षेत्र, रायपुर आदि में होते रहे। सम्मेलन के प्रयासों से

- राष्ट्रीय राजमार्ग नं. 10 का नाम महाराजा अग्रसेन राष्ट्रीय राजमार्ग रखा गया।
- एक विशाल मालवाहक जलपोत का नाम महाराजा अग्रसेन जलपोत रखा गया।
- स्थान-स्थान पर परिचय सम्मेलन एवं सामूहिक विवाह सम्मेलन का आयोजन किया गया।
- चित्र, ध्वज एवं गीत का ध्रुवीकरण
- सम्मान एवं पुरस्कार की स्थापना
- अग्रोहा डेवलपमेंट बोर्ड की स्थापना
- सन् 1982 में अखिल भारतीय वैश्य महासम्मेलन की स्थापना
- महिला एवं युवा शाखा की स्थापना
- रजत जयंती वर्ष में वर्ष भर भव्य समारोह
- 'अग्रवाल सम्मेलन' पत्र की स्थापना एवं संचालन
- श्री अग्रसेन फाउण्डेशन की स्थापना
- अग्रचेतना एवं सद्भावना रथ यात्रा का देश भर में भ्रमण
- अग्रोहा में श्री अग्रविभूति स्मारक का निर्माण कार्य प्रारम्भ
- 2 अक्टूबर 2005 को जयपुर में राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रदीप मित्तल के नेतृत्व में विराट अग्र रैली का सफल आयोजन।

वर्तमान पदाधिकारी

अध्यक्ष : श्री प्रदीप मित्तल, दिल्ली

वरिष्ठ उपाध्यक्ष : श्री अर्जुन कुमार, दिल्ली

महामंत्री : श्री बालकिशन अग्रवाल, चरखी दादरी (हरियाणा)

कोषाध्यक्ष : श्री रामकृष्ण गुप्ता, दिल्ली

उपमहामंत्री : श्री श्यामसुन्दर अग्रवाल, मोदी नगर (उत्तर प्रदेश)

उपमहामंत्री : श्री लक्ष्मीनारायण जालानी, जोधपुर (राजस्थान)

उपमहामंत्री : श्री गोपाल मोर, हैदराबाद (आंध्र प्रदेश)

उपमहामंत्री : श्री श्रीकान्त मुरारका, नवलगढ़ (राजस्थान)

महाराजा अग्रसेन

व्यक्तित्व एवं कृतित्व

लेखिका :

डॉ. स्वराज्यमणि अग्रवाल

प्रथम मेजर रामप्रसाद पोद्दार पुरस्कार से अलंकृत
रचियता 'अग्रसेन, अग्रोहा, अग्रवाल, शोधग्रंथ

अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन

83, मॉडल बस्ती, ईस्ट पार्क रोड
करोल बाग, नई दिल्ली-110005
फोन : 23633333, 23510630, फैक्स : 23550630

प्रकाशक :

बालकिशन अग्रवाल, *राष्ट्रीय महामंत्री*
अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन
83, मॉडल बस्ती, ईस्ट पार्क रोड
करोल बाग, नई दिल्ली-110005
फोन : 23633333, 23510630, फैक्स : 23550630

प्रथम संस्करण : 2005

द्वितीय संस्करण : 2007

मूल्य 10/- रुपये

SATYA PRINTERS & DESIGNERS
New Delhi, Mob.: 9312271361

समर्पण

श्री प्रदीप मित्तल, *राष्ट्रीय अध्यक्ष*

इस अजेय व्यक्तित्व को, जिसके सामने आलोचनाओं, आरोपों, प्रत्यारोपों की कितनी आंधियां आई पर वह अपने स्थान से डिगा नहीं। अपने मार्ग पर बढ़ता गया अचल, अविकल, दुर्दम्य साहस के साथ और आज मंजिल पर पहुंच कर अपना लक्ष्य हासिल कर चुका है। वह एक ऐसा दीपक है जिसे कोई तूफान बुझा न सका। संसार में वही दीपक स्थायी रहता है, जो काल के थपेड़े को सहता हुआ प्रज्जवलित रहता है। ''प्रदीप'' अग्रवाल समाज के नक्षत्र का ऐसा ही तारा है। मेरा आशीर्वाद तथा शुभकामना।

महाराजा अग्रसेन का जीवन चरित्र प्रदीप मित्तल को भेंट करते हुए एक संतोष का अनुभव हो रहा है।

स्वराज्यमणि अग्रवाल

एक राज्य के अंतर्गत अनेक राष्ट्र आते थे। राष्ट्र शब्द से अभिप्राय प्रांत से था। राज्य की परिधि बड़ी विशाल थी और उसके अंतर्गत राजा के अतिरिक्त सेवक, मित्र, कोष, दण्ड, आमात्य जनता, दुग, ग्राम, नगर पत्तन (सामूहिक नगर) आकर (खनिको की बस्तियां) मडम्ब, खेद, ब्रज (ग्वालों की बस्तियां), पथ, कानन, नदी, गिरि, झरने समस्त वाहन तथा रत्न सभी आ जाते थे। राज्याभिषेक के समय सर्वप्रथम अभिषेक अठारह क्रेशियों के प्रधान पुरुष करते थे। इसके पश्चात सामन्त राजा, श्रेष्ठ रूपति, भोज प्रमुख, आमात्य, सांवत्सर (ज्योतिष पुरोहित आदि) मंत्री आनंद के साथ रत्नों के कलश उठाकर कुमार राजा का मस्तकाभिषेक करत थे।

अग्रोहा में जो वैश्य अग्रवाल बसते थे उनके अभिलेखों में गोत्र नाम दिया है, जो वैश्य नहीं थे उनके परिचय के आगे अग्रोतक निवासी तो दिया है, पर गोत्र नाम नहीं है 'जैन प्रशस्ति ग्रंथ संग्रह' तथा जैनियों की पट्टावली ग्रंथ में ऐसे लोगों का स्पष्ट उल्लेख है। सैकडों उल्लेखों के बीच से एकाध अन्य जातियों के विवरण वहां हैं। इससे यह प्रमाणित होता है कि अग्रोहा में बसने वाले वैश्यों के अतिरिक्त अन्य जातियां भी अग्रोहा में बसती थी।

अग्रोहा का वैभव तो खंडहरों की खुदाई से ही प्रमाणित होगा। अभी तो हम अन्य गणराज्यों के वैभव का दृष्टांत पढ़-सुनकर ही अग्रोहा की उस समय की शासकी नीति एवं शासन प्रणाली की कल्पना कर सकते हैं क्योंकि 18 श्रेणी का गणराज्य कोई छोटा-मोटा राज्य नहीं होता था यह भी 'वरांग चरित्र' पढ़ने से मालूम होता है।

अग्रसेन जी को अग्रवाल परिवार का बच्चा-बच्चा जान सके इसलिए उनका यह संक्षिप्त इतिहास सरल भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। जिन्हें सचमुच इतिहास की ओर रूचि है वह इसे शौक से अपनाएंगे। पाठकों का संतोष ही मेरी सफलता है।

स्वराज्यमणि अग्रवाल

प्रारंभिक स्रोत

महाराजा अग्रसेन के जन्मवृत्त एवं इतिहास को जानने के लिए हमारे पास अब तक दो ही स्रोत थे। प्रथम भविष्योन्तर पुराण के केदारखंड का षोडषोध्याय 'अग्रवंश वैश्यानुकीर्तनम्' ग्रंथ, जो बनारस के वृहत पुस्तकालय सरस्वती भंडार (जिनमें हस्तलिखित प्रतियों का संग्रह है) से स्व. भारतेन्द्र बाबू के पिता श्री स्व. बाबू गोपाल दास के काल में (सं. 1899 वि. से संवत 1917 वि.) प्राप्त हुआ था। यह प्रति भी मूल ग्रंथ की प्रतिलिपि है। इस ग्रंथ का पृष्ठ ग्यारह तक अनुपलब्ध है, पृष्ठ 13 से 18 तक अग्रवंश की कथा तथा बाकी महालक्ष्मी व्रत के माहात्म्य से भरपूर है। इसी ग्रंथ का सहारा लेकर भारतेन्द्र बाबू हरिश्चन्द ने 'अग्रवालों की उत्पति' नामक नौ पृष्ठों की पुस्तक लिखी जिसका प्रकाशन सं. 1950 सन् 1893 में हुआ। इसका प्रकाशन भारतेंद्र बाबू की मृत्यु के पश्चात उनके फुफेरे भाई एवं काशी नगरी प्रचारिणी सभा के प्रथम सभापति बाबू राधाकृष्ण दास जी ने बंबई से ''श्री वेंकटेश्वर'' छापेखाने से प्रकाशित करवाया था। इस पुस्तक के प्रकाशित होते ही अग्रवाल समाज में अपने पूर्वजों के इतिहास जानने की उत्सुकता बढ़ी और अ. भा. मारवाड़ी समाज की ओर से डा. सत्यकेतु विद्यालंकार को यह दुरूह कार्य सौंपा गया।

वैश्य अग्रवाल समाज के इतिहास पुरुष जिनके नाम से भारत सरकार ने स्मृति डाक टिकट जारी किए

लाला लाजपत राय - 28 जनवरी 1965	सरगंगाराम - 4 सितम्बर 1977
डॉ. भगवान दास - 12 जनवरी 1969	डॉ. राममनोहर लोहिया - 12 अक्टूबर 1977
सेठ जमनालाल बजाज - 4 नवम्बर 1970	शिव प्रसाद गुप्ता - 28 जून 1988
मैथिलीशरण गुप्त - 3 जुलाई 1974	श्री प्रकाश - 3 अगस्त, 1991
भारतेंदु बाबू हरिशचन्द्र - 9 सितम्बर 1976	हनुमान प्रसाद पोद्दार - 19 सितम्बर 1992
महाराजा अग्रसेन - 24 सितम्बर 1976	डॉ. इन्द्र चन्द्र शास्त्री - 27 मई 2004
लाला दीन दयाल	काशी प्रसाद जैयसवाल
घनश्याम दास बिड़ला	पदमपत सिंघानिया
बृजलाल बियाणी	जवाहरलाल दर्डा नरेन्द्र मोहन

डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार ने विदेशों में घूम-घूम कर अग्रवाल इतिहास सामग्री का संकलन किया। इसी शोधकाल में उन्हें मेरठ के किसी सज्जन ने 'उरू चरितम' नामक ग्रंथ का अवलोकन कराया। डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार के लिए अग्रवाल जाति का इतिहास जानने के लिए ये ही दो पुस्तकें सहारा बनीं और उन्होंने अग्रवाल जाति का प्राचीन इतिहास लिखा जो लगभग 200 पृष्ठों का शोध प्रकाशन है। किंतु प्राचीन इतिहास के विद्वान डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्ता ने उनके इस परिश्रम को महज कल्पना और अंधविश्वास कहकर नकार दिया। उसके बाद अ.भा. अग्रवाल सम्मेलन की तरफ से डॉ. स्वराजमणी अग्रवाल को पुनः अग्रवाल जाति का इतिहास लिखने को मनोनीत किया गया। डॉ. अग्रवाल ने डॉ. परमेश्वरीलाल गुप्त के नकारात्मक तथ्यों पर गवेषणात्मक विवेचन प्रस्तुत करते हुए अग्रसेन, अग्रोहा, अग्रवाल की स्थापना की जो एक प्रमाणित शोध ग्रंथ माना गया। फिर भी अग्रसेन जी के विषय में लोग भिन्न-भिन्न मत समय-समय पर देते रहे और अपनी बात में सत्यता लाने हेतु तरह-तरह के झूठे प्रमाण देते रहे।

इन सब विवादों का अंत हुआ एक अनूठी उपलब्धि से जिसका नाम है 'अग्रसेन उपाख्यान'। यह ग्रंथ भोजपत्र पर लिखा हुआ एक प्रमाणिक ग्रंथ है। 1400 श्लोकों में महाराजा अग्रसेन जी के जीवन वृत्त का उल्लेख संस्कृत भाषा में बड़े ही सुन्दर ढंग से वर्णन किया गया है। इसकी संस्कृत महाभारत की भाषा से मिलती-जुलती है तथा भाषा सौष्ठव भी अद्वितीय है। सर्वाधिक आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि इसके पृष्ठ एक दूसरे से जुड़े हुए है जो पानी में डालने पर ही अलग होते है। इस ग्रंथ को प्रतिमाह पानी में स्नान कराना पड़ता है ताकि टूटे फूटे नहीं। पानी में यह महालक्ष्मी के वरदान का कथानक वजन में फूल जैसा हल्का है।

इस ग्रंथ के दर्शनार्थ गोपाल कृष्ण 'बैदिल' ने मार्च में एक प्रदर्शनी भी लगाई थी। जिन लोगों ने इसे देखा है वह स्वयं भी आश्चर्यचकित हैं। इसकी लिपि पुरानी नागरी लिपि है। एक श्लोक से दूसरे श्लोक तक कहीं कोई नंबर नहीं है। पूरा ग्रंथ निरंतरता से लिखा गया है। इस ग्रंथ में महाराजा अग्रसेन के जन्म से लेकर सन्यास ग्रहण करने तक का वर्णन अविकल रूप में दिया गया है। इस ग्रंथ की कथा 'अग्रवंश वैश्यानु कीर्तिनम्' से काफी कुछ साम्य रखती है।

इस ग्रंथ की रचना उस समय की गई है जब परीक्षित की मृत्यु से दु:खी जन्मेजय ने सर्प यज्ञ द्वारा संसार के समस्त सर्पों का विनाश क़रने हेतु एक सर्प यज्ञ का आयोजन किया। संसार के सारे नाग आ आकर उस यज्ञ में अपनी प्राणों की आहुति डालने लगे। लेकिन तक्षक जो जन्मेजय का लक्ष्य था वह नहीं आया। तब जन्मेजय ने ऋषियों से पूछा कि तक्षक क्यों नहीं आ रहा है? ऋषियों ने कहा कि तक्षक अपने प्राणों की रक्षा के लिए इंद्र के सिंहासन से लिपटा हुआ उसकी शरण में है। जन्मेजय ने ऋषियों को आज्ञा दी कि इंद्र के सिंहासन समेत तक्षक की आहुति डाली जाए। तीनों लोकों में हाहाकार मच गया। उसी समय महर्षि व्यास एवं जेमिनी ऋषि जन्मेजय के पास आए और उसे समझाते हुए बोले कि राजा परीक्षित का समय पूरा हो गया था, उनको तो मुक्ति मिली है तुम्हे इस प्रकार का क्रोध करना उचित नहीं है। तुम राजा अग्रसेन के उदाहरण से प्रेरणा लो जिसने हिंसा न करने के लिए अपने वर्ण तक का त्याग कर दिया और जेमिनी ऋषि ने जन्मेजय को अग्रसेन की कथा सुनाई।

अग्रसेन उपाख्यान

महाराजा अग्रसेन का जीवन चरित्र

जेमिनी ऋषि ने कहा हरियाणा प्रांत में सरस्वती, इषदवती और घग्घर नदी के संगम पर एक छोटा सा प्रताप नगर का राज्य था जिसके राजा का नाम बल्लभसेन था। बल्लभ सेन की महारानी का नाम भगवती देवी था। बल्लभसेन, के पिता का नाम वृहतसेन था जिनका उल्लेख महाभारत में आया है। प्रताप नगर 20 गांवों का एक छोटा सा राज्य था। वल्लभसेन के छोटे भाई का नाम कुंदसेन था। केशी उनके सेनापति का नाम था। दुर्भाग्य से वल्लभसेन के कोई पुत्र न था। छोटे भाई कुंदसेन का पुत्र एक वर्ष का हो चुका था। प्रजा ने श्री वल्लभ से दूसरा विवाह करने का आग्रह किया किंतु सूर्यवंशी क्षत्रिय एक पत्नीधारी होते हैं ऐसा निश्चय सुनाते हुए राजा वल्लभ ने दूसरे विवाह से इन्कार कर दिया। कुंदसेन को भाई के इस विचार से बड़ी खुशी हुई कि निकट भविष्य में उसका ही पुत्र राजा बनेगा। परंतु विधाता को कुछ और मंजूर था। राजा वल्लभ और विदर्भ की कन्या भगवती देवी ने मिलकर शिवजी की आराधना की। शिव जी ने प्रसन्न होकर वरदान दिया कि तुम्हारे दो पुत्र होंगे। कालांतर में अग्रसेन जी का जन्म हुआ।

मासेसश्वयुजेमाघे शुक्ले मध्य दिवसे शुभम्।
आदित्यवासरे महेन्द्रसमये उत्पन्नो बहु भाग्यवान॥
नक्षत्रेऽश्वनी मेषति लग्ने गुरू पुष्ययोगे परम्।
वुधानुराधा शनिरोहणीश्च कुजरेवतिश्च॥
श्रुतस्य शस्त्र शास्त्रे च परेषम जीवं चेतिस।
धाता गमनार्थ विच्चकार नाम्ना अग्र सम्भवम्॥ (अग्रसेन उपाख्यान)

अर्थात- क्वांरसुदी प्रतिपदा के दिन बारह बजे महेन्द्रकाल में राजा वल्लभ के घर महाराजा अग्रसेन का जन्म हुआ। महेन्द्रकाल के विषय में कहा जाता है कि इस काल में जन्मा बालक बहुत भाग्यवान शस्त्र शास्त्र में निपुण, धन धान्य, दैविक शक्ति से आपूर रहता है। अग्रसेन जी के जन्म पर प्रताप नगर में अपार खुशियां मनाई गई। प्रजा खुशी से उन्मुक्त हो नाचने, गाने, धूम मचा-मचा कर अपनी खुशियां प्रकट करने लगी। लेकिन अग्रसेन जी के चाचा कुंदसेन और उनके पुत्र को यह खुशियां जरा भी रास न आई। उनके राज्यारोहण का सपना धराशायी हो चुका था। अग्रसेन जी धीरे-धीरे बड़े होने लगे। बाल सुलभ लीला से आगे बढ़कर गुरू के आश्रम जाने की तैयारी होने लगी। उनकी शिक्षा उज्जैन में आगर नगर में संदीपन ऋषि के आश्रम के पास तांडव्य ऋषि के आश्रम में सम्पन्न हुई चौदह वर्ष की अल्पायु में वह गुरु के गृह से शस्त्र-अस्त्र में दीक्षित होकर वापस आ गए। वह तांडव्य ऋषि के आश्रम में थे तभी छोटे भाई शूरसेन का जन्म हुआ। कुंदसेन व उसका बेटा महत्वाकांक्षी और ऐय्याश प्रकृति के थे। किंतु अग्रसेन जी के शील और सद्आचरण की सभी प्रशंसा करते थे।

एक दिन राज दरबार लगा हुआ था कि पांडवों की तरफ से युद्ध का निमंत्रण लेकर एक दूत का आगमन हुआ। राजा बल्लभ ने आमंत्रण स्वीकार कर लिया और पांडवों की तरफ से युद्ध में लड़ने के लिए गए। पिता की रक्षा के लिए अग्रसेन जी भी उनके साथ गए। प्रतापनगर का राज्य कुंदसेन और उनके पुत्र को समर्पित कर गए।

युद्ध में नौ दिन के बाद वल्लभसेन शहीद हो गए। अग्रसेन व्याकुल होकर पागलों की तरह विलाप करने लगे तभी श्रीकृष्ण ने उन्हें सांत्वना देते हुए संसार की असारता का पाठ पढ़ाया। अग्रसेन जी ने महाभारत में पूरे अठारह दिन तक पांडवों का साथ दिया। अंत में युद्ध समाप्ती पर पांडवों ने उन्हें आशीर्वाद, धन धान्य देकर विदा किया।

प्रतापपुर में वापस आते ही अग्रसेन को माँ के करुणा विलाप तथा चाचा कुंदसेन के षडयंत्रो का सामना करना पड़ा। केशी सेनापति की सहायता से वह अपने ही महल में बंदी बना लिए गए। असहाय दुःखी परिस्थितियों से भ्रमित अग्रसेन जी अपने ही महल में फूट-फूट कर रो पड़े और ईश्वर से सहायता मांगने लगे। राजा वल्लभ का प्राचीन पदाधिकारी सुमंत अग्रसेन जी के प्रति बहुत ही वफादार था। उसने अपनी जान पर खेलकर अग्रसेन की रक्षा की और उन्हें कैद से छुटकारा दिलाते हुए स्वयं को उनके ऊपर न्यौछावर कर दिया।

अग्रसेन जी भागकर इष्दवती नदी के इस पार महर्षि गर्ग मुनि के आश्रम में आए। यही उनकी शरण स्थली बनी। गर्ग मुनि ने उन्हें बहुत सांत्वना प्रदान की और महालक्ष्मी की आराधना करने का उपदेश दिया। अग्रसेन जी ने महालक्ष्मी की आराधना की। दीपावली के दिन ही महालक्ष्मी प्रकट हुई और उन्हें वरदान दिया कि तुम्हारे कुल में मैं सदा प्रतिष्ठित रहूंगी। साथ ही महालक्ष्मी ने आदेश दिया कि जिस भूमि पर तुमने तपस्या की है उसी धरती के अंदर अपार धन छिपा है। राजा मरूत ने सौ अश्वमेघ यज्ञ किए थे। उससे बचा हुआ सोना सब धरती पर गाड़ दिया है। धरती के धन का अधिकारी राजा ही होता है अतः तुम संकोच न करो इस धन को स्वीकार करो और इसी बीहड़ में एक नए राज्य की स्थापना करो।[1]

गर्ग मुनि के शिष्यों की सहायता से अग्रसेन ने अग्रोहा की धरती से अपार धन शक्ति प्राप्त की वहां के बीहड़ काटे और एक नए नगर की स्थापना की। इस नवीन नगर का नाम अग्र नगर रखा गया। यह नगर सब भांति सम्पन्न था। वहां बड़े-बड़े महलों की पंक्तियां खड़ी की गई। टेढ़ी-मेढ़ी गलियां, चौबारों सड़कों, चौराहों से उसे समृद्ध किया गया। मंदिर, तालाब बावड़ी आदि बनवाई गई तरह-तरह के पक्षी, शुक, मयूर, हंस, कोकिल आदि आकर उस नगरी में आनंद की ध्वनि बिखरने लगे।

महालक्ष्मी का वरदान

तब वंशे मही सर्वा पूरिता च भविष्यति,
तव वंशे जातिपर्णे कुल नेता भविष्यति।
अद्यारम्य कुले तव नाम्नां प्रसिद्धयति,
अग्रवंशियां हि प्रजाः प्रसिद्धाः भुवनत्रये।
भुजा प्रसादं तव वसेत् नान्यस्में प्रतिदापयेत्,
येन सा सफला सिद्धिभूर्यात् तव युगे-युगे।
मम पूजा कुले यस्य सोग्रवंशो भविष्यति॥ (अग्रवंश वैश्यानुकीर्तनम्)

फल फूल वाले वृक्षों से नगर की शोभा इंद्रपुरी को भी मात करने लगी। नगर स्थापना से फुर्सत पाकर अग्रसेन ने अपनी राज्य शक्ति बढ़ाने की ओर ध्यान दिया। तभी गर्ग मुनि ने उन्हें नागकन्या के स्वयंवर की बात बताई और कहा कि तुम जाकर महीधर की कन्या से विवाह करो। नागराजा से संबंध करके तुम्हारी शक्ति अपार हो जाएगी।

गर्ग मुनि से आदेश पाकर अग्रसेन असम की तरफ बढ़े। मार्ग में अनेक कठिनाइयां आई पर सबका समाधान करते हुए अंत में मणिपुर पहुंच गए। यहां बहुत वाद-विवाद, कशमकश के बाद उनका विवाह नागराज़ा की कन्या माधवी से निर्विन्ध सम्पन्न हो गया। आर्य सभ्यता और शैव सभ्यता का मिलाप हुआ। महीधर ने विवाह की खुशी में अग्रसेन के नाम का एक नगर बसाया जिसका नाम 'अगरतला' रखा वह आज़ भी असम की राजधानी है।

माधवी से विवाह होने के पश्चात अग्रसेन ने अपनी राज्य शक्ति का विस्तार किया। अठारह गणराज्यों में अपने राज्य का विस्तार किया। उनके नाम क्रमशः हिसार, हॉसी, तोसाम, सिरसा, नारनौल, रोहतक, पानीपत, दिल्ली, जींद, कैथल, मेरठ, सहारनपुर, जगाधरी नाभा, अमृतसर, अलवर, उदयपुर आदि थे। आज भी इन राज्यों में अग्रवाल अधिकाधिक संख्या में पाए जाते हैं। उन्होंने राज्य के नागरिकों में परस्पर समन्वय वाद की भावना का विकास किया। अपनी अलौकिक सूझ-बूझ से ही उन्होंने आग्रेय गणराज्य को एक ऐसे शक्तिशाली राज्य के रूप में प्रतिष्ठित किया जिसे सम्पूर्ण देश में क्षत्रियों जैसी प्रतिष्ठा मिली तथा सभी देश के राजाओं ने अग्रसेन की कर्मठता की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उन्हें अपने समकक्ष-आदर सम्मान दिया।

विवाह एवं वंशबेलि

अग्रवंश वैश्यानुकीर्तनम के अनुसार महाराजा अग्रसेन के अठारह विवाह हुए वहां उनकी रानियों के नाम भी दिए गए हैं। किंतु अग्रसेन उपाख्यान में केवल एक ही रानी माधवी का वर्णन हैं और उनके अठारह पुत्र हुए ऐसा उल्लेख है। अग्रसेन उपाख्यान के अनुसार राजा अग्र के अठारह पुत्रों के विवाह भी नागवंशों में ही हुए हैं। इन सभी पुत्रों के वंश सोलह पीढ़ी तक अग्रोहा पर राज्य करते रहे। उसके बाद भी ग्यारहवीं सदी तक

अग्रवाल लोग अपनी भूमि पर बने रहे। मोहम्मद गोरी के आक्रमण के बाद यह राज्य सदा-सदा के लिए अतीत के गर्भ में विलीन हो गया।

महाराजा अग्रसेन ने 108 वर्ष तक राज्य किया, तत्पश्चात अपने पुत्र विभू को राज्य सौंप वन में चले गये।

अग्रसेन जी की अठारह रानियों के नाम जो अग्रवंश वैश्यानुकीर्तनम् में है वह इस प्रकार हैं- माधवी, सुंदरावती, मित्रा, चित्रा, शुभा, शीला, शिखा, शांता, रजा, चरा, शची, सखी, रंभा, भवानी, सरसा, रती, रूची और समा थे।

अन्य पुत्रों के नाम विभू, विरोचन, वाणी, पावक, अनिल, केशव, विशाल, रत्न, धन्वी, धामा, पामा, पयोनिधि, कुमार, पवन, माली, मंदोकत, कुंडल, कुश, विकास, विरण, विनोद, वपुन, वली, वीश, हर, रव, दंती, दाड़ियोदंत, सुंदर कर, खार, गर, शुभ, फ्लश, अनिल, सुंदर, घर प्रखर, मल्लीनाथ, नंद, कुंद, कुलुम्बक, कांति, शांति, क्षमाशाली, पसयामाली और विलासद तथा अन्य दो कुमार थे। उनकी पुत्रियों के नाम दया, शांति, कला, कांति, नितिक्षा, अधरा, अमला, शिका, मही, रमा, रामा, पायिनी, जलदा, शिवा, अमृता और आर्जिका आदि प्रसिद्ध हैं। ये सारी संताने राजा अग्र की संताने कही गई। अग्रसेन ने गौड़ को अपना पुरोहित बनाया। उनका पुरोहित वेद विद्या और बुद्धि में पारंगत था। उसने अपनी शक्ति से राजा अग्रसेन के राज्य में वृद्धि और कीर्ति की पताका फहराई। आज भी अग्रवाल गौड़ को ही अपना पुरोहित मानते हैं।

क्षत्रिय से वैश्य वर्ण स्वीकार करना

राज्य को सुगठित करने के बाद अग्रसेन ने प्रजा के विकास के लिए अठारह प्रकार के यज्ञ करने का संकल्प लिया। उनके समय में यज्ञ ही

(1.) Extract from the work entitled
THE ORIGIN OF AGARWALAS

" यह वंशावली परम्परा की जनश्रुति और प्राचीन लेखों से संग्रहित हुई है परन्तु इसका विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग में श्री महालक्ष्मी व्रत की कथा से लिया गया है, इसमें वैश्यों में मुख्य अग्रवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराज जयसिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अग्रवाल ही हैं। इन अग्रवालों का संक्षेप वृत्तांत इस स्थान पर लिखा जाता है। इनका मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रान्त है और इनकी बोली स्त्री और पुरुष सबकी खड़ी बोली है।"

राज्य की प्रतिष्ठा का मापदंड माना जाता था। उस समय अठारह प्रकार के यज्ञों का चलन था। उन्होंने अठारह यज्ञ कर संपूर्ण देश में अपनी ख्याति एवं कर्मठता का अद्‌भुत उद्धरण प्रस्तुत किया। लेकिन इन यज्ञों में होने वाली पशु बलि तथा हिंसा से उनके हृदय में करुणा उत्पन्न हुई और अठारहवां यज्ञ उन्होंने हिंसा रहित किया। ब्राह्मणों ने इसका घोर विरोध किया और कहा कि यदि आप यज्ञों में पशु बलि बंद कर देंगे तो आपको क्षत्रिय वर्ण से वैश्यवर्ण स्वीकार करना पड़ेगा। राजा अग्रसेन ने कहा -हे ब्राह्मण देव आपका हर दंड मुझे शिरोधार्य है पर निरीह पशुओं की बलि देकर अपनी प्रतिष्ठा की स्थापना मुझे स्वीकार नहीं है। दूसरों की जान लेकर बनाई गई कीर्ति अधिक टिकाऊ नहीं होती। यज्ञ भले ही अच्छे हो पर इनमें दी जाने वाली निरीह पशुओं की बलि ठीक नहीं हो सकती। राजा के इस परिवर्तन को लक्ष्यकर ब्राह्मणों ने उन्हें दंड स्वरूप क्षत्रिय से वैश्य वर्ण घोषित कर दिया और अठारहवां यज्ञ बिना किसी बलि के पूर्ण किया गया। इस अंतिम यज्ञ के साथ ही अग्रसेन के स्वभाव में एक अद्‌भुत परिवर्तन का समावेश हो गया। उन्होंने संपूर्ण राज्य में शाकाहारी भोजन एवम् नियम से रहन-सहन का कानून बनाया। इस तरह संपूर्ण अग्रवाल जाति में अहिंसा, शाकाहारी सादे भोजन का प्रचार, प्रसार कर अग्रसेन ने प्रजा में सदाचार की भावना का बीजारोपण किया।

गोत्र स्थापना

राज्य स्थापना यज्ञ आदि से निवृत्त होकर अग्रसेन जी ने वैश्यवंश की उत्कृष्टता कायम करने के लिए गोत्रों की स्थापना पर बल दिया। राजा के अठारह गणराज्यों के प्रतिनिधियों को एक-एक गोत्र देकर उन्होंने राज्य के मुखिया को अपने वंश का गौरव प्रदान किया। परंपरा से चले आए विवाहित नियमों को उन्होंने अनुशासन में बांधकर वैश्य वर्ण को अठारह गोत्रों में ही विवाह करने का नियम बनाया, इसके अतिरिक्त अन्य जातियों में होने वाले शादी-विवाह के संबंधों को वर्जित कर दिया। उन्होंने कहा प्रत्येक गोत्रधारी अपना गोत्र छोड़कर अन्य सत्रह गोत्रों में ही विवाह करेगा। इससे अन्यत्र नहीं। उस समय विवाह में बंधन नहीं था। परस्पर निकट के संबंधों में भी विवाह हो जाते थे जो कालान्तर में आपसी फूट का कारण बनते थे। अग्रसेन जी ने गोत्र द्वारा विवाह की नई परंपरा स्थापित कर

समाज में वंशोत्पति का ऐसा सशक्त सूत्र दिया जिससे अग्रवाल जाति आज भी बुद्धि, बल, कौशल से आपूर चहुंमुखी समृद्धि का प्रतीक बनी हुई है। यह गोत्र परंपरा का ही प्रभाव था कि राज्य में अच्छी बुद्धिवादी प्रवृत्तियों की वृद्धि हुई और 5000 वर्षो के लंबे अंतराल के बाद भी अग्रवाल जाति सारे देश में अपने उदार वृत्ति, समन्वयवाद, धार्मिक परंपरावादी संस्कृति की रक्षक बनी हुई है। अठारह गोत्र अठारह यज्ञों के पुरोहित ऋषियों के नाम पर दिए गए। उनके नाम हैं-गर्ग, गोभिल, गवाल, वात्सल, कांसल, सिंहल, मंगल, महल, तिंगल, ऐरन, टेरन, टिंगल, वित्तल, मित्तल, तन्दुल, तॉयल, गोईल और गवन उपर्युक्त गोत्र नाम अग्रवालों की उत्पत्ति से उद्वत हैं। अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन ने 1974-75 में गोत्रों के नामों में सुधार करके प्रामणिक रूप से 18 गोत्रों के नाम इस प्रकार दिये हैं-

गर्ग, गोयल, गोयन, बंसल, कंसल, सिंहल, मंगल, जिंदल, तिंगल, ऐरण, धारण, मधुकुल, बिन्दल, मित्तल, तॉयल, मंदल, नागल, कुच्छल।

समतावादी शासन तंत्र

अग्रसेन जी ने अपनी सूझ-बूझ, अपने बल कौशल से एक ऐसे साम्राज्य का निर्माण किया, जिसका आधार समाजवाद, मानवता तथा अहिंसा पर निर्भर था। उनके साम्राज्य का विस्तार राजनीति धर्म और समाजवाद के समन्वय से पूर्ण इतना व्यवहारिक था कि तत्कालीन, प्राचीन, अर्वाचीन, दार्शनिक तथा बड़े-बड़े समाजवाद के व्याख्याता भी उस तरह का दर्शन आज तक नहीं दे पाए हैं।

उन्होंने अपने राज्य के नागरिकों में परस्पर समता व ममता का आधार स्थायी तौर पर स्थापित करने के लिए अत्यंत सरल सा नियम बनाया, जिसके व्यवहारिक पक्ष की सफलता ने ही उन्हें महान तथा आदर्श राजाओं की श्रेणी में विद्यमान किया। उनके राज्य का नियम था कि राज्य में कोई भी परिवार चाहे किसी वर्ण, किसी कुल का हो, यदि वह राज्य में बसना चाहता है तो राज्य में बसने वाले अन्य परिवार उसको एक रुपया, एक ईंट भेंट करेंगे। इस तरह यदि एक लाख परिवार उस राज्य में बसते थे तो आंगतुक परिवार 24 घंटे में ही उन परिवारों के समकक्ष बन जाता था। उसका मकान तथा व्यापार स्थापित होने में केवल 24 घंटे का

समय पर्याप्त होता था। समाजवाद और मानवता का इससे बड़ा सिद्धान्त व्यवहार में कुछ हो ही नहीं सकता था।

उनके राज्य के ये नियम केवल कागजों तक सीमित नहीं थे, वह अत्यंत सरल एवं व्यावहारिक होने के कारण जन-सामान्य के लिये जीवन का एक अंग ही बन गए थे। क्योंकि देना और लेना दोनों ही राज्य का नियम था अतः देने वाले के मन में न अंह का भाव आता था और न लेने वाले के मन में कृतज्ञता का भाव आता था। परोपकार की भावना, परस्पर भाईचारे की भावना ही इस नियम का दृढ़ आधार थी। भ्रष्टाचार तथा स्वार्थ का उनके शासन में नामोंनिशान नहीं था, कृषि गोरक्षा, व्यवसाय पर ही सम्पूर्ण जन-जीवन आधारित था।

धार्मिक उत्थान

महाराजा अग्रसेन ने अपने शासन काल में अद्‌भुत क्रांतिकारी परिवर्तन किए। धर्म के क्षेत्र में उन्होंने यज्ञों को तो मान्यता दी, किन्तु बलि की प्रथा का उन्होंने समूल उच्छेद कर दिया। इसके लिए उन्हें तत्कालीन ब्राह्मण वर्ण का कठिन विरोध झेलना पड़ा। किन्तु वह अपने निश्चय पर अडिग रहे। अंत में उनकी ही जीत हुई। कालांतर में सभी यज्ञ हिंसा रहित हो गए। धर्म में अहिंसा का पालन करवा कर सम्पूर्ण जाति को उन्होंने सात्विक वृत्ति से आपूर कर एक नया मानवतावादी पाठ पढ़ाया जहां मांसाहार, अनाचार का निषेध था। जहां पशु, पक्षियों तक को राजकीय सुरक्षा प्राप्त थी।

राजकीय उत्थान

राज्य की सुरक्षा के लिए उन्होंने अति-प्राचीन परम्परागत नियमों की अवहेलना कर एक नया नियम बनाया। प्रत्येक गृहपति, बालक, वृद्ध युवती शस्त्र धारण करें और अपनी रक्षा स्वयं करें। प्राचीन नियमों के अनुसार तो केवल क्षत्रिय ही शस्त्र धारण करते थे, वहीं युद्ध में जाने के अधिकारी थे। इस नियम से देश की तीन चौथाई जनता एकदम अकर्मण्य हो गई थी। यदि कोई शत्रु आक्रमण करता तो केवल क्षत्रिय लड़ाई पर जाते थे बाकी प्रजा हाथ पर हाथ धरे बैठी रह जाती थी। राजा की जय-पराजय

पर ही उसका भविष्य निर्भर रहता था। महाराजा अग्रसेन ने इस कुलघातक नियम का घोर विरोध किया। उनके राज्य में शस्त्र चलाना अनिवार्य हो गया। प्रत्येक नागरिक को शस्त्र धारण करना आवश्यक था, अधिकार था, चाहे वे किसी भी वर्ण का हो। यही कारण था कि अग्रवाल जाति विदेशी शत्रुओं से अपनी सुरक्षा स्वयं करने में समर्थ रही और ग्यारहवीं शताब्दी तक वह अग्रोहा में अपना अस्तित्व बनाए रखने में समक्ष रही।

उनका राज्य समता के सिद्धान्त पर आधारित था। विभिन्न जाति, वर्ण, कुल के सभी लोग राजा को ही अपना पिता मानते थे, अपने राज्य को ही वह अपना देश मानते थे। चाहे वे कहीं से आए हो, कहीं के वासी हों, किन्तु अग्रसेन के राज्य में वह उन्हीं को अपना मालिक और राज्य को ही अपनी मातृभूमि समझते थे। ऊंच-नीच का कोई भेद नहीं था। सभी लोग राज्य की समृद्धि के लिए ही प्रयासरत थे। इसलिए ही अग्रसेन के राज्य में अल्पकाल में ही राज्य की चहुंमुखी उन्नति हुई। उन्होंने राजा का अधिकार सभी को दिया। विवाह के दिन घुड़चढ़ी के अवसर पर दुल्हा छत्र चंवर धारण कर एक दिन के लिए अपने को राजा के समान अनुभव कर सकता था। यह एक क्रांतिकारी नियम था जहां राजा प्रजा सभी में एकत्व की भावना समुचित विकास हुआ। अग्रवाल जाति में आज भी यह नियम चला आ रहा है।

शैक्षणिक उन्नति

शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने अभूतपूर्व क्रांतिकारी कदम उठाए। सभी वर्ण, सभी वर्ग के लिए शिक्षा अनिवार्य थी। शिक्षा के साथ-साथ कला, साहित्य, औद्योगिकी विकास की ओर भी उन्होंने पूरा-पूरा ध्यान दिया।

उनके राज्य में धर्म और संस्कृति को जीवन का अनिवार्य तत्व माना गया। सभी अपने अपने धर्म का पालन करते हुए, समान रूप से शासन के सहयोगी बनें, यह उनके दैनिक जीवन का मूल मंत्र था। हजारों वर्ष बाद आज भी अग्रवाल समाज में यही धर्म और संस्कृति, दान-पुण्य, परस्पर मिल बांट खाने की प्रथा अग्रसेन जी की विरासत के रूप में विद्यमान है। यही कारण है कि आज भी इस जाति ने अपने देश को बढ़ाने, विकास करने में हर क्षेत्र में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है।

शासकीय सेवाएं, शिक्षा, कला, विज्ञान, साहित्य अभियांत्रिकी, मिलिट्री,

राजनीति के क्षेत्र में हर जगह अग्रवाल सपूत अपनी सेवाएं दे रहे हैं। सामाजिक सेवा तथा धार्मिक अनुष्ठानों के क्षेत्र में तो अग्रवाल समाज सदा अग्रणी रहा है। इस जाति ने कभी शासन से कोई अपेक्षा नहीं की है। यह तो केवल सेवा में लगी रही है सेवा ही इसका जीवनोद्देश्य बन गया है।

अन्य उपलब्धियाँ

अग्रसेन जी के इस तरह प्रतिष्ठापित होने से चारों ओर उसके यश का डंका बजने लगा। देवताओं का राजा इंद्र को उसके वैभव से ईर्ष्या होने लगी। उसने अग्रसेन जी के राज्य में वर्षा बंद कर दी। चारों ओर अकाल, भुखमरी का तांडव गूंजने लगा। अग्रसेन ने अपना सारा खजाना प्रजा के सुख के लिये खोल दिया। कुंए बावड़ी, तालाब से राज्य में पानी की कमी को दूर किया। अंत में गर्ग मुनि के निर्देशानुसार पुनः एक बार महालक्ष्मी की तपस्या की। महालक्ष्मी प्रकट हुई। उन्होंने कहा-वर मांग। राजा ने कहा 'इन्द्र मेरे राज्य में अशांति पैदा करता है इसे बंद करें' महालक्ष्मी ने कहा 'इन्द्र तेरे राज्य में अशांति पैदा नहीं करेगा। और पुनः वरदान दिया कि आज से यह पृथ्वी तेरे वंश से पूरित होगी सब जाति और वंशों के कुल नेता तेरे वंश में उत्पन्न होंगे। आज से यह कुल तेरे नाम से जाना जाएगा तथा अग्रवंशी पूजा तीनों लोकों में अग्र होगी। जब तक अग्रकुल में महालक्ष्मी की पूजा होती रहेगी यह कुल सदा धन वैभव से आपूर रहेगा।

महालक्ष्मी से वरदान पाकर राजा प्रसन्न हो गया। उसके राज्य का विस्तार उत्तर में हिमालय पर्वत, पर्वत की नदियों तथा पूर्व और दक्षिण की सीमा गंगा जी व पश्चिम की सीमा यमुनाजी से लेकर मारवाड़ देश के पास के देश थे।

एक रुपया, एक ईंट

अग्रसेन जी के राज्य में एक लाख परिवार बसते थे। उनमें से कोई भी यदि देवी विपत्ति का शिकार हो जाता था तो समस्त राज्य के परिवार उसको एक रुपया, एक ईंट स्वेच्छा से देते थे और वह परिवार पुनः अपनी स्थिति को प्राप्त कर लेता था। समाजवाद का ऐसा अद्‌भूत उदाहरण अन्य किसी राज्य में न देखा गया न सुना गया। बाहर से आए हुए नए परिवार भी इसी प्रकार की सुरक्षा प्राप्त करने के अधिकारी थे।

अग्रसेन का काल

'अग्रसेन उपाख्यान' तथा महालक्ष्मी व्रत कथा के आधार पर अग्रसेन जी का जीवन चरित्र प्रामाणिक रूप से यही माना जाता है। उनका काल महाभारत युद्ध के समय का ही माना जाएगा। क्योंकि 'महालक्ष्मीव्रत कथा' तथा अग्रसेन उपाख्यान दोनों में ही उनका काल कलियुग का प्रारंभ माना गया है। राजा परीक्षित के समय में ही कलि का प्रवेश हो चुका था। 'अग्रसेन उपाख्यान' के अनुसार अग्रसेन जी राजा परीक्षित से 14 या पंद्रह वर्ष बड़े थे। [1]

निष्कर्ष

1. प्रताप नगर हरियाणा प्रांत का ही एक राज्य था जो तीन नदियों के

---

1. 'अग्रसेन उपख्यान' में महालक्ष्मी की महिमा का वर्णन करते हुए श्लाकों का उद्धरण प्रस्तुत है। यह सभी सामग्री हमें श्री गोपाल कृष्ण बेदिल आमगांव के सौजन्य से प्राप्त हुई है। यह ग्रंथ उनकी ही धरोधर है, अग्रसेन उपख्यान के कुछ श्लोकों को मैंने संस्कृत के बड़े से बड़े विद्वान व आचार्यों को दिखाया है। उन सभी का यह मत है कि 'अग्रसेन उपख्यान' की भाषा महाभारतीय ही है इसमें दो मत नहीं है। महर्षि वैदिक विद्यापीठ के रीडर विद्वान श्री राकेश त्रिपाठी ने अग्रसेन के जन्म संबंधी श्लोकों का निरुपण करते हुए अपना मत दिया है वह नीचे की पंक्तियों में ज्यों का त्यों है।

महर्षि जेमिनी प्रणीत 'जय महाभारत' में महाराजा अग्रसेन की कथा जन्म, परिचय कृति आदि का सम्यक विवेचन हुआ है। अग्रसेन उपाख्यान से उपलब्ध इन श्लोकों की भाषा, नक्षत्रीय भासनाम कथन व्यवस्था, चरणों में निर्धारित मात्रा का अधिक या कम होना, लोक में प्रचलित अनुष्टुप् के ही सदृश वैदिक त्रिष्टुप् छन्द के समान छन्दों का क्राचित्क किंवा बहुल प्रयोग इत्यादि कारण इस अंश का महाभारतीय होना सिद्ध होता है। संम्भवतः ऐसा जनश्रुति भी है।

महेन्द्र काल में उत्पत्र व्यक्ति अदभूत क्षमता या शौर्य का धनी होता है। उन्होंने कहा महाभारत के बाद आचार्य वागह मिहिर में स्याह प्रति दिवसीय काल को महेन्द्रकाल, अमृतकाल, वक्रकाल तथा शून्यकाल के रूप में चार भागों में विभक्त कर समय के शुभाशुभत्व पर विचार किया है। आचार्य वागह मिहिर के अनुसार इन काल विभागों में महेन्द्रकाल खण्ड अति शुभ, मंगलम्, विजयप्रद तथा सभी कार्यों में पूर्ण सिद्धि देने वाला है-'महेन्द्रो विजयी नित्यम्' से यही तात्पर्य ध्वनित है।

संगम पर बसा था, वे तीन नदियां हरियाणा में ही थी। इषद्वती, घग्घर और सरस्वती। सरस्वती नदी अब विलोप हो गई है।

2. अग्रोक नगर आग्रेयगण की स्थापना-जिसे आज 'अग्रोहा' कहा जाता है महाराजा अग्रसेन ने ही की थी इसके पूर्व वह गणराज्य नहीं था। महाभारत में कर्णविजय के प्रसंग मे श्लोक आया है-

भद्रान रोहितकांश्रैव आग्रेयान मालवानपि।

गणान् सर्वान् विनिर्जित्य नीतिकृत प्रहसन्निव॥ महाभारत वन पर्व 25520

इसमें 'आग्रेयान' पाठ न होकर आग्नेयान् पाठ ही सही है जो कि आग्रेय दिशा की ओर संकेत देता है। अग्रसेन, अग्रोहा अग्रवाल ग्रंथ में पहले भी यह मत प्रतिस्थापित किया गया है।

3. महाराजा अग्रसेन का जन्म परीक्षित के जन्म से पंद्रह वर्ष पूर्व का था और कलि के प्रारंभ में उन्होंने अपने नवीन गणराज्य की स्थापना की तथा एक सौ आठ वर्ष तक राज्य करने के बाद स्वयं तपस्या करने वन में चले गए।

अग्रसेन जी की शासन व्यवस्था

युद्ध की विभीषिका तथा साम्राज्यवाद के विस्तार की महत्वाकांक्षा के दुष्परिणामों से अवगत राजा अग्रसेन ने अपने शासन का आधार लोकतंत्र की परम्परा पर रखा। इन शासन तंत्र के दो मुख्य नियम थे।

राजा जनता की इच्छा से चुना जाता था। जनता की इच्छा ही सर्वोपरि थी। राजा बनने के बाद भी राजा केवल अपनी ही इच्छा से कोई कार्य नहीं कर सकता था। उसका प्रत्येक कार्यमंत्री परिषद की सलाह से ही हुआ करता था। राजा बनने के पूर्व वह समस्त प्रजा के सामने शपथ लेता था कि 'यदि मैं प्रजा से द्रोह करूं तो मेरी संतुलित, धन, आयु और यश सब नष्ट हो जाऐं। मैं मंत्री परिषद के आदेशों का पालन करूंगा।'

शासन प्रबंध के लिए उन्होंने प्रत्येक नगर का, ग्राम का एक अधिपति बनाया। इन शासकों को ग्रमिक कहते थे। दस ग्राम के शासकों को दशिक, 20 ग्रामों के शासकों को विशाधिप कहते थे, 900 ग्रामों के शासकों को सतपाल कहते थे। 1000 ग्रामों के शासकों को सहस्त्रपति कहते थे। जनपद या राष्ट्र के अंतर्गत जो नगर थे उनके एक-एक सर्वार्थ चिंतक शासक की नियुक्ति की जाती थी ये सब राज्य के पदाधिकारी राज्य की सभा में सभासदों के रूप में भी सम्मिलित होते थे।

इन सभी पदाधिकारियों के कार्य अलग-अलग थे। ग्रमिक का कार्य ग्राम

संबंधी सब कार्यों को सम्पन्न करना था। यदि वह उसमें कोई दोष देखता था तो उसे दशिक के पास पहुंचा देता था, दशिक विंशाधिप को, विंशाधिप शतपाल को, शतपाल सहस्त्रपति को और सहस्त्रपति सम्पूर्ण राज्य के राजा को पहुंचा देता था। इस प्रकार राज्य की छोटी से छोटी कमी से भी राज्य सरकार अवगत रहती थी तथा उसे दूर करने का प्रयत्न करती थी।

अग्रसेन के राज्य में उन्होंने सीधे जनता से सम्पर्क बनाए रखने का एक और नियम बनाया था। गणों के शासन में उन्होंने कुलों को महत्व दिया। ये कुल, बुद्धि, रूप व धन में समान नहीं हुए होते भी जाति की दृष्टि से अपने को एक समान समझते थे। इनके कुल वृद्ध ही इनके मुखिया होते थे। इनका कर्तव्य था कि वे अपने कुलों को नियंत्रण में रखें ताकि उनमें फूट न पड़ने पावे। कुलों को महत्व देने के कारण ही राज्य में फूट पड़ने की आशंका समाप्त हो गई थी।

राज्य में फूट नहीं पड़े लोगों के मन स्वच्छ रहें, इस विचार से उन्होंने राज्य का यह नियम बनाया कि राज्य में आकर जो भी बसना चाहे, उसे सारी प्रजा एक मोहर, एक ईंट प्रदान करें ताकि नवीन परिवार पुराने परिवार के समकक्ष बन जाये। प्रजा में ऊंच-नीच के भेद मिटाने वाला यह अद्‌भुत नियम था। इसमें राजा से लेकर सेवक तक सभी शामिल थे।

अग्रसेन के इस नियम का ही यह फल निकला कि दूर दराजों में, जंगल में बसे लोग वापस आकर अग्रसेन के राज्य में बसने लगे। राज्य धन-जन से पूर्ण हो गया।

अहिंसा

अहिंसा को उन्होंने राज्य धर्म का आधार बनाया। पूर्व के राजाओं में यज्ञ में पशु बलि का प्रचलन जोरों पर था। अग्रसेन ने धर्म की आड़ में की जा रही इस हिंसा से पशुओं को मुक्ति दिलाई। उन्होंने लोगों को तलवार तो पकड़ाई किन्तु अपनी रक्षा के लिए। धर्म और राजनीति के संदर्भ में उन्होंने प्रजा को स्वयं निर्णय लेने का अधिकार दिया।

उनके शासन की यही सब खूबियां थी जिनके कारण आज भी अग्रवाल जाति अनगिनत संख्या में पूरे विश्व में फैली हुई अपनी दान, दया, धर्म का डंका बजा रही है। जिस जाति के पूर्वज ऐसे महान पुरुष हो क्यों न उनसे सारा राष्ट्र ही गौरवान्वित हो।

उपसंहार

महाराजा अग्रसेन का काल चारों ओर शांति तथा अमन चैन का काल रहा है। महाभारत युद्ध की विभीषिका से त्रस्त लोग शांति की खोज में जहां जिसे स्थान मिला वहीं एक समूह बनकर जीवन यापन कर रहे थे। इसी समय अग्रसेन जी का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने चारों ओर घूम- फिर कर बिखरे हुये लोगों को एकत्र किया, उन्हें संगठित किया और एक चहुंमुखी शांतिपूर्ण धार्मिक, अहिंसावादी राजनीति की छत्र-छाया में प्रजा का पालन पोषण कर उन्हें सुख चैन दिया। यही कारण है कि आज भी वे सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रेरक बने हुए हैं।

अग्रसेन जी के युग की सम्पूर्ण धार्मिक स्थिति पर यदि एक विहंगम दृष्टि डाली जाए तो यह निष्कर्ष सरलता से निकलता है कि राजा और प्रजा सभी धार्मिक सहिष्णुता में न केवल विश्वास करते थे वरन् उसका पालन भी करते थे। स्वयं अग्रसेन जी भी वैदिक धर्मावलंबी होते हुए भी विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के प्रति विद्वेष का लेशमात्र भी आभास नहीं होने देते थे। राजा स्वयं चाहे किसी धर्म का अनुयायी हो तथापि प्रजा के ऊपर धार्मिक कट्टरता का कोई बंधन नहीं था। धर्म को सदैव ही व्यक्तिगत हित की बात माना गया। कालान्तर में इसी धार्मिक सहिष्णुता के अनुयायी भारतवर्ष के अन्य शासक भी बने।

महाराजा अग्रसेन ने स्वयं तो छत्र और चंवर धारण किया उन्होंने अपनी प्रजा को भी यह अधिकार दिया कि विवाह के समय दूल्हा छत्र और चंवर धारण कर अपने को अग्रवंशीय परम्परा का पोषक मानते हुए गौरव अनुभव करे। राजा और प्रजा में समानता लाने का यह एक अद्भुत दृष्टिकोण था। समता और ममता का ऐसा उदाहरण विश्व के किसी भी शासक में अब तक नहीं पाया गया है।

उनके काल में धर्म के अधिष्ठातागण भी बौद्धिक विकास में किसी प्रकार से शिथिलता नहीं आने देते थे। राजा और प्रजा सभी प्रकार के दार्शनिक विचारों को सुनने और समझने के लिए तत्पर रहते थे। यहां मस्तिष्क की मस्तिष्क से और सिद्धान्त से सिद्धान्त की टक्कर होती थी। यही कारण था कि धर्म अपने सिद्धान्त पर नवीन वातावरण में भी अडिग बना रहा।

श्री लक्ष्मी, विष्णु, शिव, कार्तिकेय आदि देवी की पूजा होती। प्रकृति में सूर्य, नदी, वृक्ष, आकाश आदि की पूजा भी प्रचलित थी। हल बैल, चक्र, वेदी आदि राजा के राज चिन्हों के रूप में प्रतिष्ठित होते थे। खेती

के लिए सिंचाई इत्यादि का प्रबन्ध करना शासन का मुख्य कर्तव्य था। नदी, तालाब, कुंओं, झील आदि का निर्माण कर पानी की कमी को दूर करने का प्रयास शासन द्वारा ही किया जाता था। भूमि चाहे किसकी हो उसके उपज के लिए प्रबंध शासन ही करता था। भूमि का मालिक राजा को अन्न के रूप में कर देता था। कृषि करने की प्राचीन प्रणाली हल-बैल ही थी इसीलिए धर्मशास्त्रों में हल को बहुत महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था। ऋग्वेद में तो हल और हल चलाने वाले के लिए बहुत से मंत्र कहे गये है-स्त्री-पुरुष, बच्चे सभी खुशहाल थे। कृषकों को ऐसी सुविधा अन्य किसी राज्य में नहीं प्राप्त हुई थी।

स्त्रियों की दशा बहुत ही उन्नत अवस्था में थी, वे शिक्षित तथा स्वतंत्र होती थी। राजकाज में परामर्श भी देती थी। आभूषणों का विशेष प्रचलन था। कम उम्र में विवाह नहीं होते थे। विवाह में उनकी इच्छा सर्वोपरि रहती थी, विभिन्न वंशों से विवाह करने की प्रथा प्रचलित थी। राजा तो बहु-विवाह कर सकता था पर स्त्रियों के लिए बहु-विवाह वर्जित थे। विधवाओं को विशेष संरक्षण प्राप्त था। संयुक्त परिवार की प्रणाली ही परम्परा का निर्वाह करती थी।

सम्पूर्ण समाज अहिंसा और शाकाहारी पद्धति से जीवन निर्वाह करता था। अहिंसा उनका दैनिक जीवन था, लेकिन युद्ध में हिंसा ही उनका परमो धर्म था।

इनके वंश के लोग सदा इन्हीं देशों में बसे तथा पंजाब से मेरठ, आगरा तक इनकी बस्तियां प्रमुख रूप से विद्यमान रहीं।

महाराजा अग्रसेन के राज्य में कोई गरीब अमीर नहीं था। सभी एक से थे। यहां समाजवाद ही प्रजा का आधार था। लोकतंत्रात्मक पद्धति में राजा-प्रजा सभी समान थे, यही कारण था कि उनके वंशजों ने बारह पीढ़ी तक निर्विघ्न शासन किया।

यह उनके ही पुण्य प्रताप का फल है कि अग्रवालों में आज भी वही सहिष्णुता, उदारता, धार्मिकता कूट-कूट कर भरी हुई है। अहिंसा और शाकाहारी शुद्ध सात्विक जीवन ही अग्रवालों के जीवन की आधारशिला बनी है। इसीलिए वे आज भी लक्ष्मीपुत्र हैं। लक्ष्मी उनके आंगन में नृत्य करती रहती है। इसीलिए किसी ने कहा है 'महाराजा अग्रसेन पांच हजार वर्ष बाद भी पूज्यनीय हैं, वे इसलिए नहीं कि वह एक प्रतापी राजा थे, किंतु इसलिए कि क्षमता, ममता और समता की त्रिविध मूर्ति थे वह।'

विभिन्न कालों में तीर्थधाम अग्रोहा का इतिहास एवं विकास

प्राचीन काल पंजाब सरकार के गजेटियर में लिखा है-'अग्रोहा' एक बड़ा प्राचीन नगर था। यह पंजाब प्रांत के हिसार जिले की फतिहाबाद तहसील में दिल्ली-सिरसा रोड पर दिल्ली से लगभग 115 मील दूर पर एक छोटा सा कस्बा है। यह नगर अग्रवालों का जन्मस्थान कहा जाता है जो आज से 2000 वर्ष पूर्व बहुत शक्तिशाली था। अनुमान है कि जिस समय घाघर नदी वहां बारहो महीने बहती थी उस समय अग्रोहा धनाढ्य और भाग्यशाली अग्रवालों की बस्ती थी।

टॉल्मी नामक एक ग्रीक लेखक ने 'भूगोल का उद्धरण' नामक अपनी स्वरचित पुस्तक में 'अगारा' नाम के शहर का वर्णन किया है जिसे भूगोलवेत्ता ने 'अग्रोहे' से मिलान किया है टॉल्मी ने अपने नक्शे में 'अगारा' को वहीं दिखाया है जहां आज का अगरोहा है।

मोशियों प्रजलुस्की ने अपने लेख में अगरोहा की पहचान 'अग्रोदक' या 'अग्रोद' के रूप में की थी। उनके इस कथन की पुष्टि अगरोहा में मिली मुद्राओं से भी होती है जिन पर ब्राह्मी लिपि में 'अगोद' के अगाच जनपदस लिखा है।

सन् 1881 में इस प्राचीन स्थान की खुदाई हुई, उसमें मूर्तियों के टुकड़े, मनके, मालाएं, सिक्के तथा पक्की मिट्टी से बनी हुई प्रतिमाएं प्राप्त हुई हैं। साथ ही आग्रेय जनपद के तथा यौधियों के अनेक सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिन पर वृक्ष की आकृति बैल सॉड की आकृति आदि बनी हैं।

स्व. राहुल सांकृत्यायन भारत के विश्व विख्यात शोध विद्वान माने जाते हैं। उनका मत था कि अग्रवाल, अग्रहरी, रोहतगी, रस्तोगी, श्रीमाल, ओसवाल, तरीवाल, गहोई आदि जातियों के पूर्वज भारत की एक प्राचीन शस्त्र जीवी 'योधेय' जाति से थे। योधेय गणतंत्र एक समृद्ध राज्य था। कुछ विद्वान इसे क्षत्रियों का गणतंत्र कहते हैं। राहुल जी ने 'जय योधेय' पुस्तक में यह स्थापना की कि अग्रेय ही अपनी शक्तिशाली प्रवृत्ति वीर, उद्यमी होने के कारण योधेय कहलाने लगे वास्तव में वे आग्रेय थे यही कारण है कि अगरोहा में योधेयों के हजारों सिक्के प्राप्त हुए हैं।

अग्रोहा से कुछ पूर्व में स्थित वरबाला नामक गांव में भी आग्रेयगण की

कुछ ताम्र मुद्राएं प्राप्त हुई हैं जो इस समय 'ब्रिटिश म्यूजियम' में हैं। इन मुद्राओं में सामने की ओर से बाढ़ से पेड़ और नीचे अभिलेख तथा पीछे की ओर सांड सिंह और लक्ष्मी जी का चित्र है।

इन मुद्राओं की प्राप्ति के अनुसार माननीय श्री जयचंद विद्यालंकार ने लिखा, भद्र, रोहतक, मालवा, पंजाब के सुप्रसिद्ध स्थान थे जहां गणतंत्रात्मक शासन था। उसके आधार पर आग्रेयगण आज भी वहीं मिलता है, जहां से अग्रोहे की मुद्राएं प्राप्त हुई हैं।

सती शीला और रिसालु राजा की प्रचलित कहानी के आधार पर डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार ने लिखा है कि कुषाण राज्य के 100 वर्ष ई. के पूर्व अग्रोहा विद्यमान था।

सिकंदर युद्ध की वापिसी के समय उसका युद्ध 323 ई.पू. में आग्रेय जाति से हुआ था। यह युद्ध झेलम चेनाब के संगम से वापस लौटते समय हुआ था। अर्थात अगरोहे के निवासी उस समय तक दूर-दूर तक अपना गणराज्य बनाए हुए थे। डॉ. बार्नेट ने अपनी पुस्तक 'इनवेजन ऑफ इंडिया बाई अलेक्जेंडर दी ग्रेट' में अग्गलसोई शब्द का प्राकृत नाम अग्गल को यूनानी लिपि में लिखने का प्रयत्न माना है। इससे प्रतीत होता है कि अग्गल आग्रेय का ही एक अन्य प्राकृत रूप है जो शिवगढ़ झंग जिले के शेरकोट प्राचीन शिवपुर के आस-पास पंजाब में स्थित है।

यूनानी लेखक डायडोरस के लेख के अनुसार अग्गलसोई प्रजातंत्र राज्य में उस समय 80,000 पैदल और लगभग 2000 घुड़सवारों की सेना थी। वे सभी वीर अत्यंत वीरता के साथ सिकंदर के रूबरू हुए थे।

दूसरे अन्य रोमन लेखक का वर्णन है कि अग्गलसोई के वीर लोग जब आक्रमणकारियों को नहीं रोक सके तब उन्होंने अपने घरों में आग लगा दी उनके स्त्री बच्चे सब उसी आग में जल मरे।

एक अन्य किवदंती के अनुसार सिकंदर के साथ अग्रोहे पर युद्ध के समय मगध देश के राजा महापद्मनंद भी थे, जिनकी रियासत सतलुज नदी के पूर्व गंगा की घाटी तक फैली हुई थी। परंतु यह किवदंती प्रमाणिक नहीं हो सकती, क्योंकि सिंकदर का आग्रेय जाति से युद्ध भारत लौटते समय हुआ था। यह युद्ध अग्रोहा में न होकर उसके अन्य गणराज्यों में हुआ था जो कि आग्रेय गणराज्य की सीमा में थे। इसीलिए वहां के निवासी आग्रेय जाति के नाम से जाने जाते थे।

कहा जाता है कि इस युद्ध में लगभग एक लाख वीर काम आए और सिंकदर को यहां असफलता ही मिली, तथा उसने षडयंत्र द्वारा आपस में फूट डालकर आग्रेय जाति को पराजित करने की योजना बनाई। आग्रेयों की वीरता से प्रसन्न होकर उसने विजित राज्य उन्हीं को सौंप दिया और 326 ई.पू. में इस युद्ध की स्मृति में उसने अगरोहे के पास ही एक सिरसा नामक नगर की स्थापना की जो हरियाणा में आज भी विद्यमान है।

702 ईसवीं में अगरोहा का यह गणराज्य वहीं के निवासी शिवानंद और धर्मसेन की कुटिलता के कारण परास्त हुआ, उन्होंने धाम नगर के राजा समरजीत से मिलकर अगरोहा राज्य पर चढ़ाई करवा दी और अगरोहा को अपने हाथ में ले लिया। इसी तरह सिरसा के रहने वाले रतनसेन ने भी मुहम्मद अब्दुल बिन कासिम से मिलकर 712 ई. में चढ़ाई करा दी। इस तरह बार-बार विदेशियों के आक्रमण होते रहने से यहां के निवासी नगर छोड़कर दूर-दराज जाकर बसने लगे। सन् 1195 ई. में शहाबुद्दीन गोरी के आक्रमण में यह पूर्णतः ध्वस्त हो गया। कहा जाता है कि इस युद्ध में एक लाख बीस हजार सेना, जन, धन की हानि हुई।

इस प्रकार अगरोहे का यह गणराज्य नष्ट भ्रष्ट हो गया। यहां के निवासी अग्रोहा छोड़कर पानीपत, नारनोल, करनाल, दिल्ली, मेरठ, अलीगढ़, बुलंदशहर, आगरा, मारवाड़, उज्जैन (म.प्र.) उत्तर पर्वतीय स्थान, कुमायूं डिवीजन बिहार और उसके पूर्व बंगाल प्रांत आदि पूर्व और दक्षिण प्रदेशों में जाकर बस गए। सन् 1200 ई.स. के लगभग 'इबन्नबतूता' नामक एक फारसी यात्री ने अपने भारत भ्रमण के समय में यह लिखा है कि दिल्ली से लगभग 110 मील की दूरी पर एक समृद्ध, नगर के अवशेष देखने को मिले। यहां कोई मनुष्य देखने को नहीं मिला। मकानों में कुछ-कुछ सामान ज्यों की त्यों पड़ा था ऐसा लगता था कि युद्ध में इस नगर को ध्वस्त कर दिया गया है।

सन् 1388 के लगभग अगरोहे के किले का सामान या पत्थर आदि, बादशाह फिरोजशाह तुगलक ने निकालकर अपनी नई राजधानी हिसार के किले में और मस्जिद में लगवा लिया था।

मध्यकाल में अग्रोहा को बसाने के कई बार प्रयत्न हुए। 12वीं शताब्दी में मुंडल जी नामक वणिक हुए जिन्होंने संवत 1110 के करीब अपने नाम से 'मण्डाहल' नामक नगर जो अब भिवानी से 26 मील दूर है, बसाया था।

इन्हीं के परिवार ने मण्डाहल को सन् 1515 में छोड़ कर 'केड' नामक कस्बा बसाया था। इन्हीं के परिवार ने मण्डाहल को सन् 1515 में छोड़कर 'केड' नामक कस्बा बसाया जिससे मुंडल जी के वंशज आज भी केडिया वंश के पुकारे जाते हैं। शहंशाह अकबर के शासनकाल में अग्रोहा उनके राज्य का एक केन्द्र था और अग्रोहा के नाम से सम्राट अकबर के समय में सिविल एडमिनिस्ट्रेशन होता था।

राय राम प्रताप भी सम्राट अकबर के दरबार में एक सम्मानित पद पर कार्यरत थे। इनकी योग्यता और बुद्धिमत्ता से प्रसन्न होकर इनकी वंश परंपरा के लिए इन्हें राय का खिताब प्रदान किया गया था। इन्हीं के वंश में राय इंद्रमन शाहजहां के दरबार में दीवान थे एवं अंग्रेजों के समय में सन् 1701 ई. में रियासत जोधपुर से आकर कुछ लोग अगरोहा बसे। लेकिन दस मील की दूरी पर जो बीगड़ नाम का गांव है वहां के निवासियों ने इन्हें बहुत तंग किया। इस पर उन्होंने पटियाला नरेश राजा अमरसिंह से प्रार्थना की। उनके दीवान नानूमल अग्रवाल थे। उन्होंने अगरोहे की थेह पर 1774 ई. में किला बनवा दिया और उसको अपने अधिकार में लेकर उन लोगों की रक्षा की। अगरोहा के खेड़े पर आज भी उनका किला विद्यमान है। इनके वंशीय राय सन्थाली लाल को बिहार प्रांत के डिप्टी गवर्नर पद पर सम्मानित किया गया था इनका वंश आज भी पूर्वी क्षेत्र बिहार के पास विद्यमान है।

इस तरह अगरोहे का यह टीला 5000 वर्ष के लंबे काल को अपने गर्भ में छिपाए हरियाणा के सुनसान में मस्तक झुकाए खड़ा है। 1881 में जब पंजाब प्रांत के पुरातत्ववेत्ता ने इस खेड़े की खुदाई का कार्यारंभ किया और वहां से अग्रवालों की बस्ती की प्रामणिकता के संकेत प्राप्त हुए। अग्रवालों के मन में अपनी जन्मभूमि के दर्शन की ललक उत्पन्न हुई।

वर्तमान काल

स्व. ब्रह्मनंद जी के प्रयासों से संवत 1964 विक्रमी संवत में अग्रवाल जाति के आदि पुरुष महाराजा अग्रसेन की जयंती मनाने की घोषणा अग्रोहा में ही हुई। संवत 1964 में सर्वप्रथम अग्रसेन जयंती का श्रीगणेश करते हुए उन्होंने अग्रोहा में विशाल मेला आयोजित किया। प्रथम बैठक में सभी वर्गों के प्रमुखों को आमंत्रित किया गया। जिनमें पं. चेनाराम जी

पुजारी, ठाकुर कुलजी सिंह चम्पावत सेठ बिहारी लाल, चौ. सेधाराम गोदारा, चौ. हुक्काराम भाबूं, चौ. बप्तसी राम जाखड़, सेठ हरीलाल दास एवं मौलाना फरीद खां से उन्होंने अपने विचारों को मूर्त रूप देने की योजना बनाई। सन् 1908 में स्वामी ब्रह्मानंद जी के प्रचार से अगरोहा में एक कुंआ बनाने की योजना की गई जिसे बाद में विशेशर लाल हलवासिया ट्रस्ट द्वारा पक्का बनवा दिया गया। उसके साथ एक प्याऊ का भी निर्माण किया गया। उसके बाद कलकत्ता निवासी सेठ रामजीदास बाजोरिया ने इस कुंए पियाऊ के समीप ही महाराजा अग्रसेन का एक विशाल मंदिर तथा धर्मशाला बनवा दिया। सन् 1992-94 में काली चरणजी केशान कलकत्ता वालों के प्रयत्न से उनके परिवारों वालों ने इसी धर्मशाला व मंदिर का पुनरूद्धार करवा दिया।

सन् 1918 में देशभक्त सेठ जमनादास जी बजाज ने वर्धा में अ.भा. मारवाड़ी अग्रवाल सभा की स्थापना की जिसका नाम बाद में अ.भा. अग्रवाल महासभा पड़ा। 1919 में बंबई में इसका अधिवेशन भी हुआ। इसमें महात्मा गांधी भी पधारे थे। सेठ जमनालाल बजाज ने अग्रोहा अग्रवालों के विकास के लिए कई सराहनीय कार्य किए, किंतु आपसी विवादों में घिर कर महासभा का कार्य बाद में ठप्प पड़ गया।

सन् 1945 में 26, 27, 28 मार्च को अग्रोहा में अ.भा. अग्रवाल सभा का प्रथम अधिवेशन हुआ। यह अधिवेशन श्री कमल नयन बजाज की अध्यक्षता में हुआ। दिल्ली के मास्टर लक्ष्मी नारायण जी इसके महामंत्री थे। इसमें मुख्य रूप से यह प्रस्ताव सामने आया कि अग्रोहा को पुनः बसाया जाए।

इस प्रकार लाहौर, अमृतसर, दिल्ली तथा अन्य नगरों में अग्रवाल सभा की स्थापना हुई लेकिन अग्रोहा की वह धरती प्यासी की प्यासी ही रही। 1, 2, 3 अक्टूबर को पुनः अग्रवाल महासभा का दिल्ली में अधिवेशन हुआ। आचार्य जुगल किशोर जी की अध्यक्षता में यह सम्मेलन प्रारंभ हुआ। इस सभा के महामंत्री स्वनाम धन्य लाला लाजपतराय जी के भतीजे चंपतराय जी एडवोकेट थे। इस समय भी अग्रोहा बसाने की योजना की पुष्टि हुई। परन्तु अग्रोहा की धरती ज्यों की त्यों वीरान रही।

अग्रोहा विकास ट्रस्ट की स्थापना

अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन ने 1976 में अग्रोहा विकास ट्रस्ट की स्थापना की। तब से अब तक अग्रोहे की इस धरती पर अनवरत रूप से विकास कार्य चल रहा है। प्रारंभ में इसकी स्थापना में सेठ रामेश्वरदास गुप्ता, श्री श्रीकिशन मोदी, स्व. बृजलाल चौधरी (मद्रास), स्व. श्री तिलकराज अग्रवाल के द्वारा ट्रस्ट का कार्य आगे बढ़ा। धीरे-धीरे लोग जुड़ते गए आज तो अग्रोहा में विकास कार्य द्रुत गति से चल रहा है।

अग्रोहाधाम के दर्शनीय स्थल

महाराजा अग्रसेन मंदिर : ट्रस्ट परिसर में पूर्व दिशा की ओर भव्य आकर्षक मंदिर 31 अक्टूबर, 1982 को उद्घाटित।

कुलदेवी महालक्ष्मी मंदिर : ट्रस्ट के मुख्य द्वार के ठीक सामने भव्य मंदिर की 28 अक्टूबर, 1985 को प्राण प्रतिष्ठा हुई।

बुद्धिदायिनी सरस्वती माता मंदिर : लक्ष्मीजी के साथ मां सरस्वती की आराधना भी अपेक्षित है। शरद पूर्णिमा के दिन 1993 में उद्घाटित।

विशाल शक्ति सरोवर : वर्ष 1996 में उद्घाटित, 300 बाय 400 वर्ग फुट के आकार का शक्ति सरोवर बना है, इसमें 41 नदियों का स्वच्छ जल भरा गया है। लाखों रु. की लागत से सरोवर के मध्य में समुद्र मंथन का दृश्य आकर्षण का केन्द्र है, जिसके चारों ओर रंगीन फव्वारे बने हुए हैं।

सत्संग व सभा कक्ष : 180 बाय 110 वर्ग फीट का जिसमें 5000 लोगों के बैठने की व्यवस्था है।

वानप्रस्थ आश्रम व यात्रीगृह : शक्ति सरोवर के चारों ओर भूतल पर बरामदों का निर्माण कर प्रथम एवं द्वितीय मंजिल पर 68-68 कमरों का निर्माण (आधुनिक सुख सुविधायुक्त) कराया गया है। यात्रियों की आवास व्यवस्था सुगम हो गई है।

महाराजा अग्रसेन धर्मशाला एवं अतिथिशाला : ट्रस्ट परिसर में ही 44 कमरों की भव्य अतिथिशाला का निर्माण किया गया है।

बृजवासी अतिथि सदन : ट्रस्ट की मथुरा इकाई द्वारा 30 लाख रुपये की लागत से 30 कमरे एवं एक विशाल काष्ठिं सत्संग हॉल का निर्माण किया गया है, ज़िसमें बांके बिहारी भगवान श्रीकृष्णजी महाराज के अनुपम विग्रह है। भवन के मुख्य द्वार पर भगवान शिव का भव्य मंदिर है, जहां निरन्तर पूजा अर्चना चलती रहती है। शुभारम्भ 22 अप्रैल, 1997 को हुआ।

हनुमान मंदिर एवं 90 फीट ऊंची भगवान मारुति की प्रतिमा : ट्रस्ट परिसर में ही संकट मोचन हनुमानजी का मंदिर बनाया गया है। प्रतिवर्ष हनुमान जयंती एवं शरद पूर्णिमा पर यहां मेला लगता है। मंदिर के पास ही 90 फीट ऊंची भगवान मारुति की विशाल प्रतिमा है, जो विश्व में सबसे ऊंची है।

बाल क्रीड़ा केन्द्र (अप्पु घर) : शक्ति सरोवर के समीप ही बाल क्रीड़ा केन्द्र (अप्पु घर) की स्थापना की गई है, जहां बच्चों के लिये झूले-हिन्डोले, बच्चों की रेलें, बसें, साईकिलें एवं अन्य अनेक प्रकार के मनोरंजन के आधुनिक उपकरण उपलब्ध है। यहां चहुंओर से बच्चे आते हैं।

नौका विहार : भगवान मारुति के मंदिर के सामने एक वृहद कृत्रिम जलाशय बनाकर उसमें नौका विहार की व्यवस्था की गई है।

*रज्जू मार्ग (**Rope Way**) :* महालक्ष्मी माता मंदिर के गुम्बद से सरस्वती माता मंदिर के गुम्बद तक इस मार्ग का निर्माण किया गया है। इस मार्ग द्वारा वैष्णोदेवी के मंदिर से भैरव बाबा के मंदिर तक सीधा पहुंचा जा सकता है।

महाराजा अग्रसेन शोध केन्द्र : अग्रसेन ट्रस्ट परिसर में ही महाराजा अग्रसेन शोध केन्द्र की स्थापना 1994 में की गई, जहां अनुसंधानार्थियों को बैठकर अग्रवाल साहित्य का अध्ययन करने की सुविधा उपलब्ध है।

मारुति चरण पादुका मंदिर : खुदाई में प्राप्त भगवान मारुति की प्रतिमा रंग-बिरंगे कांच से निर्मित है।

महाराजा अग्रसेन सेवा सदन भोजनकक्ष: आगरा के अग्रबंधुओं के सहयोग से निर्मित। सैकड़ों व्यक्ति एक साथ बैठकर भोजन करते हैं।

वैष्णोदेवी मंदिर : कृत्रिम पहाड़ियों से सुसज्जित मंदिर। इसके दर्शन से मनोकामना पूर्ण होती है। दर्शन हेतु रैम्प से ऊपर जाना पड़ता है।

भैरव बाबा मंदिर : शरद पूर्णिमा के दिन वर्ष 2000 में उद्घाटित। मां सरस्वती के गुम्बद स्थल में स्थापना की गई है।

डायनासौर : विशाल दैत्याकार डायनासौर का पहाड़ी पर निर्माण किया गया है।

जलधारा से युक्त भोलानाथ की प्रतिमा की स्थापना की गई है जिस पर निरन्तर प्रवाहित होती जलधारा मनोरम लगती है।

शीला माता मंदिर : अग्रोहा में थेह के दूसरी ओर मुम्बई के स्व.

तिलकराजजी अग्रवाल के परिजनों ने भव्य मंदिर शीला माता की प्राचीन मढ़ी पर बनाया है। मंदिर का गुम्बद 85 फीट ऊंचा बना है। इससे राधा-कृष्ण, सीता-राम, अष्टभुजा दुर्गा, शिव, गणेश, पार्वती, लक्ष्मी, सरस्वती, हनुमान जी के भव्य विग्रह बने हैं। रंग-बिरंगे फव्वारों, प्राकृतिक दृश्यों, उद्यानों से सुसज्जित आकर्षक मंदिर हैं।

महाराजा अग्रसेन मेडिकल कॉलेज, अस्पताल, शोध संस्थान : महाराजा अग्रसेन मेडिकल एज्युकेशन एवं साइन्टिफिक रिसर्च सोसा. द्वारा निर्मित यह विशाल चिकित्सा शोध संस्थान एवं मेडिकल कॉलेज अग्रोहा के ऐतिहासिक खंडहरों के सामने 277 एकड़ भूमि में फैला है। 1000 बेड का एशिया का सबसे बड़ा अस्पताल बन रहा है। पूरा प्रोजेक्ट लगभग 100 करोड़ रु. का है। यह शिक्षादान एवं चिकित्सा दोनों का महायज्ञ है।

अग्रसेनजी का प्राचीन मंदिर : ट्रस्ट परिसर के थोड़ा आगे महाराजा अग्रसेन जी का प्राचीन मंदिर सुशोभित है, इसका निर्माण 1939 में हुआ।

श्री अग्रसेन वैष्णव गौशाला : 1915 में स्थापित इस प्राचीन गौशाला में सैकड़ों गायों के रहने की व्यवस्था है।

प्राचीन थेह : अग्रोहा किसी समय महाराजा अग्रसेन जी की राजधानी थी। कालान्तर में विदेशी आक्रमणों से यह नष्ट हो गया। उसी नगर के ध्वंस थेह के रूप में 566 एकड़ भूमि में यहां फैले पड़े हैं। खेड़े के ऊपर किले के खंडहर, प्राचीन नगर के अवशेष, ईंटों से बने मकान आदि स्पष्ट दिखाई देते हैं। वर्षा के समय यहां से अनेक मूर्तियां, सिक्के, मिट्टी के पात्र, ईंटों से बने मकान आदि निकलते हैं। यहां बच्चों के मुन्डन संस्कार होते हैं।

निर्माणाधीन तिरुपति बालाजी मंदिर : महाराजा अग्रसेन जी के गुम्बद स्थल पर इस भव्य मंदिर का निर्माण किया जा रहा है। यहां पांच मंजिला लिफ्ट भी लगाई जायेगी। प्रयास किया जा रहा है कि 32 अक्टूबर, 2001 को इस मंदिर का भी उद्घाटन हो जाए।

वार्षिक मेला : अग्रोहा धाम में प्रतिवर्ष शरद पूर्णिमा के अवसर पर विशाल अग्रवाल कुंभ (वार्षिक मेला) तथा चैत्र सुदी पूर्णिमा और आश्विन पूर्णिमा को हनुमानजी का मेला लगता है। शीला माता मंदिर एवं मढ़ियों पर प्रतिवर्ष भाद्रपद अमावस्या को विशाल मेला लगता है। समग्र अग्रोहा स्वर्ग समान लगता है। अतः आप अग्रोहाधाम की यात्रा का भी

प्रोग्राम बनावें तथा परिजनों एवं इष्टमित्रों सहित अग्रोहा पधारें। अग्रोहा में आपके आवास एवं भोजन की श्रेष्ठतम व्यवस्था उपलब्ध है। अग्रोहा धाम तीर्थ की यात्रा जब भी समय हो कर सकते हैं।

वर्तमान अग्रोहा में 12-13 सतियों की मड़ियाँ थेह के ऊपर अभी भी विद्यमान हैं। अग्रोहा में मित्तल गोत्रिय 100 व्यक्तियों के 15 परिवार आज भी हैं जो कई पीढ़ियों से वहां बसे हैं। इन परिवारों के आधे सदस्य नेपाल, सिक्किम, गंगानगर, दार्जिलिंग और कलकत्ता में व्यापार करते हैं। शेष व्यक्ति यहां खेती और दुकानदारी का कार्य करते हैं।

सन् 1976 में यहां गांव के सरपंच रामलाल अग्रवाल थे। जनसंख्या की दृष्टि से यहां जाट 600, राजपूत 250, हरिजन 500 व जाटव तथा पंजाबी 400 की संख्या में रहते हैं। मुस्लिम भाई एक भी नहीं है। गांव में एक हाई स्कूल तथा नर्सरी स्कूल है। कोआपरेटिव बैंक तथा सहकारी समिति है। स्टेट बैंक की शाखा है। डाकखाना है जो निकटवर्ती 16 ग्रामों में डाक वितरण करता है। राजकीय चिकित्सालय तथा पशु अस्पताल भी यहां हैं। हाइडिल तथा फारेस्ट के सरकारी कार्यालय यहाँ कार्यरत हैं।

यह गांव हिसार विधान सभाई क्षेत्र में हैं। पिछले 18-20 वर्षों में इस ग्राम में काफी विकास कार्य हुआ है। बिजली लगी है तथा सरकार मंडी स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील है।

अग्रोहा के आस-पास

अग्रोहा में वैश्य जाति के साथ अन्य जातियां भी रहती थी यह इस बात से प्रमाणित होता है कि इस गांव के पास ही कुम्हारिया नामक गांव है जिसमें लगभग 300 घर कुम्हारों के हैं। कुछ घर अन्य जाति के भी हैं।

श्री मुरारीलाल सिंगल म्युनिसपल कमिश्नर हॉसी के कथनानुसार जब अग्रोहा अपनी उन्नति के शिखर पर था उस समय उसके पश्चिम उत्तर में कोई 15 कोस की दूरी पर युवकों की शिक्षा के लिए एक गुरुकुल था जिसके नाम पर अभी तक 'बालसंबंध' नामक गांव हैं। इसी प्रकार पूर्व दक्षिण की ओर युवतियों के लिए गुरुकुल था जिसके नाम से 'कुमारीगांव' अभी तक प्रसिद्ध है। कुमारी गांव में एक महामाई की छतरी है जिसके विषय में बताया जाता है कि वह उस गुरुकुल की मुख्य अध्यापिका थी और जब उस गुरुकुल पर लाहौर के किसी राजा ने आक्रमण किया तब वहां की युवतियों ने डटकर सामना किया तथा अपने प्राण दे दिए। मुख्य

अध्यापिका के साथ अन्य अध्यापिकाओं तथा युवतियों ने जौहर किया, जिनकी स्मृति में सतियों की छतरियां बनवाई गई। इनके चिन्ह अभी तक विद्यमान हैं। महिम के सेठ हरभज शाह की पुत्री सती शीला इसी गुरुकुल की शिक्षिता बतलाई जाती है।

अग्रोहा के साथ दिल्ली का भी घनिष्ठ संबंध रहा है। वर्तमान नई दिल्ली में डेली रोड़ पर एक बहुत बड़ी बावड़ी है जो 'अग्रसेन बावड़ी' के नाम से प्रसिद्ध है। इस पर मुसलमानों का अधिकार हो जाने से वहां पर एक मस्जिद बनी हुई है, वहां पर बृहस्पतिवार को तैराक लोक एकत्र होते हैं।

कहा जाता है कि महम के सेठ हरभजशाह ने अग्रोहा को बसाने का प्रयत्न किया था। उन्होंने अग्रोहा में अपनी एक दुकान खोल ली थी। जो व्यक्ति अग्रोहा में बसना चाहता था उसे इस लोक के या परलोक के लिए वह धन दिया जाता था। इस प्रकार बाहर के बहुत से लोग इस गांव में पुनः बस गए थे। इसी में एक लखी नाम का बंजारा था। उसने एक तालाब बनवाकर हरभजशाह से अपने ऋण की मुक्ति कराई थी। लखी तालाब के नाम से आज भी वहां टूटी-फूटी पाल बनी हुई है। घाट टूटे फूटे हो गए हैं। पर उनके चिन्ह अभी तक शेष हैं सन् 100-150 ई. के आसपास रिसालू खेड़ा के नाम से विख्यात कुषाणकालीन सम्राट विमकॅडफिसिस की सेना के रहने का स्थान रिसाडू खेड़ा के नाम से अभी खंडहर के रूप में विद्यमान है।

कहा जाता है कि उसके दीवान महताशाह जो रूपशाह स्यालकोट वाले का पुत्र था उसकी शादी सेठ हरभजनशाह की सुपुत्री शीला के साथ हुई थी। राजा रिसालू शीला को प्राप्त करना चाहता था। सती शीला ने प्राण देकर अपने सतीत्व की रक्षा की। उसी सती शीला का भव्य मंदिर आज अग्रोहा में अपने पुराने स्थान पर बना हुआ है।

अग्रोहा धाम पहुंचने के लिए मुख्य रेल व बस मार्ग

दिल्ली से अग्रोहा राष्ट्रीय राजमार्ग नम्बर 10 पर 190 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। दिल्ली के अंतर्राज्जीय बस अड्डे से हिसार या सिरसा के लिए जो बसें चलती हैं, वे वाया बहादुरगढ़, रोहतक, हांसी, हिसार होते हुए अग्रोहा मोड़ तक जाती है।

दिल्ली से हिसार 167 कि.मी.
हरिद्वार से दिल्ली 200 कि.मी.
अलवर से हिसार 195 कि.मी.
हिसार से अग्रोहा 22 कि.मी.
झुंझुनूं से हिसार 120 कि.मी.
कुरुक्षेत्र से हिसार 140 कि.मी.

राष्ट्रीय विकास में विभिन्न कालों में अग्रवालों का योगदान

महाराजा अग्रसेन ने अपने राज्य का विस्तार गणतांत्रिक पद्धति पर किया। उन्होंने अपने राज्य का विस्तार साम्राज्यवाद की महत्वाकांक्षा से नहीं किया अपितु राज्य का विस्तार उस समय भारत की राजकीय डॉवाडोल परिस्थिति में स्थिरता लाने के लिए किया। इसीलिए उन्होंने राज्य में यह नियम बनाया कि राज्य में सभी समान हो अहिंसक हों, धार्मिक तथा राष्ट्र के विकास के पूरक हों।

उनके राज्य में वर्ग भेद, जाति भेद, समाज में ही था लोगों के हृदय में द्वेष या ईर्ष्या की धारणा नहीं थी। वहां लोगों में वैचारिक भेद होते हुए भी परस्पर सौहार्द और प्रेम का भाव बना रहता था। धार्मिक सहिष्णुता उनमें गजब की थी। एक समूह दूसरे समूह के लोगों को अपना अतिथि न मानकर गोंठ भाई मानता था।

आग्रेयवंशी समाज में यह परंपरा बहुत काल तक समाज में प्रेम भाव के विकास का कारण बनी। अग्रसेन की बारह पीढ़ी तक कहीं भी राज्य में अशांति का वातावरण नहीं बना। जो विदेशी शासक आए वह भी यहां के प्रेमभाव से प्रभावित हो यहीं के बनकर रह गए। ई.स. की तीसरी शताब्दी में सिकंदर महान के आक्रमण के बाद यहां के आग्रेयवंशी पुनः एक बार शक्ति संगठन करने में जुटे और चौथी शताब्दी ई. के प्रारंभ तक महान गुप्त साम्राज्य का प्रारंभ और विकास अपने बाहुबल से किया।

ईसा की छठवीं शताब्दी तक आग्रेयवंशी गुप्त शासक कमजोर हो गए और सातवीं शताब्दी तक आते-आते इनका नामोनिशान मिट गया। राज्य के अग्रोतकवासी जहां स्थान मिला वहीं अपने पुराने वैभव को भूलकर उसी नगर में उसी प्रांत की संस्कृति के साथ घुल मिल गए। वहां की भाषा, वहां का पहनावा अपना लिया केवल अपनी परंपरा को बनाए रखे जिसके कारण ही वह हजारों वर्षों बाद भी भारत में अपनी अलग पहचान बनाए रखने में सक्षम हुए हैं। [1] सिकंदर के साथ आए यूनानी इतिहासकारों की

1. स्व. विद्यालंकार जी ने 'अग्रवाल जाति का इतिहास' लिखते समय फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन की लाईब्रेरी का अवलोकन किया था। वहां उन्हें कुछ प्राप्त नहीं हुआ। हमने भी टोल्मी, डायडोरस की पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद पढ़ा है वहां भी अग्रसेन जी की कथा कही नहीं है। बल्कि अग्गलसोई जाति के सिवा वहां किसी व्यक्ति का नाम नहीं मिला।

पुस्तक में अग्लसोई जाति की वीरता का विवरण तो स्पष्ट है, लेकिन वहां अग्रसेन जी के इतिहास संबंधी कोई कथा या किवदंती अंकित नहीं हैं।

महाराजा, अग्रसेन की कथा में उनकी पीढ़ी में नेमिनाथ [2] नाम का राजा हुआ जिसने नेपाल बसाया। नेमीनाथ के वंश में गुर्जर हुआ जिसने गुजरात देश बसाया। यही कारण है कि गुजरात के प्राचीन इतिहास में अग्रसेन जी की कथा आती है। सृष्टि का यह नियम रहा है कि जब कोई जाति अपना निवास छोड़कर अन्य स्थानों पर बसी तो उसने अपनी पूर्वजों की कथा का स्मरण बनाए रखा और अपने को उन्हीं की संतति मानने में अपना गौरव समझा।

अग्रवाल इतिहास के शोध में यह सूत्र लोगों में भ्रम का कारण बना। चंपावती नगर के लोग अग्रसेन को अपने स्थान का मानते हैं। गुजरात के लोग अपने स्थान का, महाराष्ट्र के लोग मालव नगर के कारण अपने स्थान का मानते हैं। 'आगर' नगर के लोग उन्हें म.प्र. का मानते है। 'अग्रसेन उपाख्यान' के अनुसार राज्य स्थापना के बाद महाराजा अग्रसेन देशाटन को गए। वहां जहां-जहां रूके उनके वंशजों ने उनकी स्मृति में वहीं-वहीं उनके नाम से एक नगर बसाया। 'अगरतला' नगर राजा महीधर ने अपनी बेटी माधवी के विवाह के उपलक्ष्य में बसाया जो आज भी असम में उपस्थित है। 'आगर' नगर जो उज्जैन के पास है वही ताडव्य ऋषि के आश्रम में अग्रसेन की शिक्षा दीक्षा हुई थी इसलिए बसाया गया। इसी प्रकार गुजरात महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश के आगरा नगर की स्थापना का कारण भी अग्रसेन जी की संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए उनका देशाटन ही रहा। यह उचित भी प्रतीत होता है।

सार यह है कि अग्रवाल जाति जहां भी रही उसने उस राष्ट्र का गौरव बढ़ाने में सदा सहयोग दिया और अपना पूर्ण योगदान दिया। अग्रसेन जी की बारहवीं पीढ़ी के बाद गुप्त साम्राज्य ने भी देश का जो विकास किया वह तो अविस्मरणीय ही है। उनके बाद भी अग्रेयगण के लोग अपने निवास स्थान पर साधारण नागरिक की भांति रहकर अपना धर्म निर्वाह

2. हमारे नेपाल प्रवास में वहां एक पुस्तक देखने को मिली-'प्राचीन नेपाल' वहां यह अंकित है कि नेपाल पर प्रथम तीन पीढ़ी गुप्त राजाओं ने राज्य किया।

करते रहे। मारवाड़ बसने वाले लोंगों ने अपना जीवन शुद्ध व्यापारिक बना लिया लेकिन इनके खून में जो बुद्धि और कला का मिश्रण था उसने उन्हें प्रत्येक स्थान पर गौरवशाली जाति के रूप में विद्यमान बनाए रखा। इनमें प्रसिद्ध पुरुषों में मंडल जी (बारहवीं शताब्दी में) का नाम प्रसिद्ध है जिन्होंने 1110 के करीब मंगल नामक गांव को बसाया जो भिवानी से 13 कोस दूर है। इन्हीं के परिवार के पाहुरामजी तथा भोलाराम जी ने 15-15 ई. में मंडाहल छोड़कर 'केड' नाम के गांव की स्थापना की जिससे 'केडिया' वंश चला।

इन्हीं दिनों झुंझनु में तुलसीराम जी जालीरामजी जैसे अत्यंत प्रतापी व्यक्ति हुए, जिनके नाम से जालान वंश चला जिनका प्रताप आज भी पूरे भारत में विख्यात है। इसी प्रकार पोद्दार वंश के प्रवर्तक सेठ रामचंदजी, गोईन्का वंश के प्रवर्तक सेठ गोविंदरामजी, खेतान वंश के प्रवर्तक सेठ खेलसी दास जी, हिम्मतसिंह का वंश के प्रवर्तक सेठ हिम्मत सिंह जी, नीपानीवंश, मानसिंह जी, योगमलजी, सेठ खेमचंदजी इत्यादि बड़े-बड़े पुरुष हुए जिन्होंने भारत के विकास में अपना पूर्ण सहयोग देकर राज्य में अपना वंश चलाया।

मुगल सम्राट अकबर के दरबार में मधुशाह नामक एक अग्रवाल जाति के महापुरुष हुए जिनके नाम से मधुशाही पैसा चलाया गया। टोडरमल अग्रवाल भी उसी समय के महान दानी वीर पुरुष हुए।

राय रामप्रताप भी अकबर के दरबार में एक सम्मानित पद पर कार्यरत थे। उनकी राजभक्ति से योग्यता और बुद्धिमत्ता से प्रसन्न होकर अकबर ने उन्हें 'राय' का खिताब प्रदान किया था और शाही मुहर से अंकित एक बहुमूल्य कंठा उपहार में दिया था। इन्हीं के वंश में राय इंद्र मन हुए जो शाहजहां के दरबार में दीवान थे। आपके पश्चात इसी वंश में राय ख्यालीराम हुए उन्हें बिहार प्रांत के डिप्टी गवर्नर का सम्माननीय पद प्राप्त था। आप बड़े शक्तिशाली, प्रभावशाली और प्रतिभा सम्पन्न पुरुष थे। आपको ईस्ट इंडिया कम्पनी ने पटना का दीवान बनाया था।

आपके ही वंश में पौत्र पटनीमल हुए जिन्होंने अविस्मरणीय सार्वजनिक कार्य किए। हिंदू तीर्थ ज्वालामुखी, हरिद्वार, मथुरा, गया इत्यादि धार्मिक

स्थलों में कई स्थानों का, मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया मथुरा में 'शिवताल' के नाम से एक बहुत मशहूर ताल बनवाया। दिल्ली में पटनीमल की गली, पटनीमल की खिड़की तथा पटनीमल की हवेली के रूप में आज भी आपकी स्मृति अंकित है।

वर्तमानकाल में पिछले सौ वर्षों में इस जाति ने जो साहस, पराक्रम से व्यापारिक जगत में सफलता प्राप्त की है वह राष्ट्रीय विकास की धारा में सदैव अविस्मरणीय रहेगी। जिस प्रकार इनका व्यापार भारत के कोने-कोने में फैला हुआ है, उसी प्रकार चारों दिशाओं में इनकी बड़ी-बड़ी वैभवशाली धार्मिक संस्थाएं भी इनकी अमर कीर्ति घोषित कर रही हैं। कलकत्ता, बंबई, बंगाल, असम, उत्तर प्रदेश तथा भारत के समस्त व्यापारिक केन्द्रों में इनका वैभव चमक रहा है। जूट, रूई, खाद, चाय, कपड़ा, तेल, चावल, मोटर, रबड़ आदि उद्योग धंधों में तथा बैंक इन्श्योरेंस कंपनियों के चलाने में उन्होंने अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया है।

पैसा तो सभी कमाते हैं पर उसका राष्ट्रहित में सबों के लिए सदुपयोग करना, निछावर करना अग्रवाल जाति की ही परंपरा रही है। आसाम से लेकर करॉची तक और पेशावर से लेकर रामेश्वरम् तक, भारतवर्ष के सभी तीर्थ स्थान बड़े-बड़े रेलवे स्टेशन, व्यापार केन्द्र और मंडिया अग्रवाल संस्थाओं का निर्माण कर सार्वजनिक क्षेत्रों में इस जाति ने अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया है। मरूभूमि तक में जहां कोसों तक छाया का नामोनिशान नहीं है, ऐसे जनशून्य स्थानों के बीच भी अग्रवालों की बनवाई छोटी बड़ी सैकड़ों की संख्या में धर्मशालाएं, बावड़ी, प्याऊ चारागाह आदि बने हुए हैं।

इस जाति की यह विशेषता रही है कि उसने जो भी कार्य किए राष्ट्रहित में सबके लिए किए। केवल अग्रवाल जाति तक उसको सीमित नहीं रखा। शिक्षावृत्ति, सदाव्रत आदि बांटना इनकी दैनिक दिनचर्या का एक अंग था और आज भी है। यह गीता में बताए निष्काम कर्म को ही अपना धर्म मानते हैं। इन्होंने राष्ट्र की चाहे कितनी सेवा की पर कहीं कभी उससे अपेक्षा नहीं की। कोई पद, कोई उपाधि, कोई सम्मान आदि की इच्छा किए बिना, यह जाति सदा सर्वक्षेत्र में अग्रसेन जी के बताए मार्गो पर अग्रसर रही है।

स्वतंत्रता संग्राम में इस जाति ने देश को 'नेशनल कांग्रेस' के साथ सहयोग देकर अपनी महत्वपूर्ण सेवाएं अर्पित की हैं। देशभक्ति के क्षेत्र में पंजाब केसरी लाला लाजपतराय का नाम भुलाया नहीं जा सकता। भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद हिन्दी के जनक कहे जाते हैं। डॉ. भगवानदास गुप्त ने तो समाजशास्त्र, राजनीति शास्त्र, व्यवस्था शास्त्र जैसे गंभीर विषयों के मनन में अपना जीवन व्यतीत किया। उनका नाम केवल भारतवर्ष में नहीं, अपितु अंतर्राष्ट्रीय जगत में भी आज श्रद्धा के साथ लिया जाता है। उन्होंने काशी विद्यापीठ की स्थापना कर अपने नगर को अमरत्व प्रदान किया है। डॉ. रघुवीर जिन्होंने 4 लाख शब्दों का शब्दकोष तैयार कर संसार को आश्चर्यचकित कर दिया।

न्याय और कानून में सर शादीलाल अग्रवाल अंतर्राष्ट्रीय स्तर के ख्याति प्राप्त रत्न हुए। प्रो. डॉ. रघुवीर जो हिंदी, संस्कृत साहित्य के चमकते तारे थे, डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, सर मनोहरलाल अग्रवाल, पंजाब गर्वमेंट के कई वर्षो तक आर्थिक मंत्री थे। डॉ. एल.सी. जैन जो जापान में अंतर्राष्ट्रीय संघ की ओर से आर्थिक सहायक बनाए गए थे। सर गंगाराम जिनकी सलाह लेने अनेक अंग्रेजी हुकूमत के वाशिंदे उनके घर जाया करते थे। ऐसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक अपनी सेवा देने वाले जाति के इतिहास को कौन लिख सकता है? कौन वर्णन कर सकता है?

श्री बनारसीदास गुप्त जो हरियाणा के भूतपूर्व मुख्यमंत्री के पद पर सुशोभित हुए, डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकार, डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त जिन्हें न्यूमेस्टिक के अध्ययन के फलस्वरूप अंतर्राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। जिनकी कई पुस्तकें आज भी ऐतिहासिक शोधों का प्रमाणिक सूत्र मानी जाती हैं। इसी अग्रवाल जाति की देन है।

वर्तमान में सुभाष गोयल जिन्होंने -एसेल वर्ल्ड' बनाकर भारत को गौरवान्वित किया है। जी.टी.वी. तथा अन्य उनकी योजनाएं आज अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सम्मानपूर्वक भारत के गौरव में चार चांद लगाने में पर्याप्त हैं।

अपनी सामाजिक स्थिति में अगर यह जाति पुनः सुधार कर ले, कुरीतियों और रूढ़ियों को दूर कर विशुद्ध परंपरा का निर्वाह कर आगे बढ़े तो पुनः यह अपने प्राचीन गौरव को प्राप्त कर देश का भविष्य उज्जवल कर सकती हैं।

अग्रवाल शब्द : व्युत्पति और विकास

भारत की वर्तमान जातियों में अग्रवाल जाति का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसकी गणना वैश्य वर्ण के अन्तर्गत जातियों में की जाती है। इस वैश्य वर्ण का उल्लेख ऋग्वेद में स्पष्ट रूप से आता है। प्रसिद्ध इतिहासकार नगेन्द्रनाथ वसु के मत में ऋग्वेद में वर्णित 'पणि' जाति ही वैश्य वर्ण की वणिक जाति है। इनका जीवन कृषि, वाणिज्य, गो-पालन और सूद इन्हीं व्यवसायों पर निर्भर था।

इसी पणि जाति को पाश्चात्य इतिहासकारों ने 'फिनिक' कहा। प्राचीन ग्रीक और जर्मनों के बीच यह जाति फोनिक (Phonik), फनेक (Phenik) और पणिक (Phinik) नाम से परिचित थी। ईसवीं सन् से 500 वर्ष पूर्व हिरोडोट्स ने लिखा था कि फेनिक गुण ही आदि वणिक के रूप में परिचित थे। यही 'वणिक' पाञ्चिक आर्यों के साथ मिलकर कालान्तर में 'विश' या 'विट्' के नाम से प्रसिद्ध हुए। इन्होंने अपना कर्म व्यवसाय (जो अहिंसा और कृषि, गोपालन, वाणिज्य पर निर्भर था) और अपनी संस्कृति को सदा अक्षुण्य रखा। यही जाति कालांतर में 'अग्रवाल' [1] कहलाई, जिसके कुल पुरुष महाराजा अग्रसेन थे, जिनका मूल निवास 'अग्रोहा' का वह समृद्ध नगर था, जो आज जिला हिसार में एक खेड़े के रूप में विद्यमान है।

अग्रवाल जाति के साथ अग्रवाल शब्द उसी समय से जुड़ा जबसे वैश्य वणिकों को अपना देश छोड़कर अन्यत्र जाकर बसना पड़ा 'अग्रोहा वाले' कहते-कहते वे सब अयरवाले अगरवाल, अग्रवाल हो गए। भौगोलिक स्थिति के आधार पर भी अग्रवालों को यदि 'अग्र' या किसी भी स्थान से जोड़ा जा सकता है तो वह स्थान अग्रेयगण अर्थात अग्रोहा ही है। अतः यह सत्य निःसंदिग्ध रूप से स्वीकार करना पड़ेगा कि उत्तरी भारत की अनेक जातियां जो अपनी स्वतंत्रप्रियता के कारण अपने नगर को त्याग कर आगे बढ़ी वह मध्य भारत राजस्थान तक ही सीमित न रहीं, अपितु सूदूर पूर्व की ओर भी बढ़ी। जहां-जहां ये जातियां गई, अपने साथ अपने स्थान का नाम पूर्वजों की कथा, परम्परा आदि लेती गई और उसी नाम से नए नगर की स्थापना की जहां के वे निवासी थे। यही कारण है कि अग्रवालों का एक बहुत बड़ा अंश आज भी उत्तर भारत के एक ऐसे क्षेत्र विशेष में केन्द्रित है जो अग्रोहा से कुछ सौ मील की परिधि में ही है।

आगरा, आगर, अगलपुर ये तीन स्थान ऐसे हैं जहां से भी अग्रवालों का निकास माना जाता है। आगरा के संबंध में तो यही कहना पर्याप्त है कि यह अग्रसेन का ही बसाया नगर था जो कालांतर में उजड़ गया था बाद में पुनः बसाया गया। दूसरी भ्रांति उज्जैन से 40 मील की दूरी पर स्थिति आगर नामक स्थान से है। कुछ विद्वानों के मत में अग्रवाल जाति का मूल स्थान यही है। बंबई प्रांत के कुछ गुजराती अग्रवाल कहते है कि सौराष्ट्र में बसा 'अगर' नगर ही अगरवालों का मूल स्थान है। बिहार में चंपावती नगरी के पास 'अर्गलपुर' को ही कुछ विद्वान अग्रवालों का मूल स्थान

---

1. 'अग्रवाल' समूह के साथ अग्रवाल जाति वाचक शब्द कब से जुड़ा इसके विषय में विद्वानों के विभिन्न मतभेद हैं। डॉ. परमेश्वरीलाल गुप्त ने 'अग्रवाल जाति के विकास' में यह निर्णय दिया कि 'शब्द 200 वर्ष से अधिक पुराना नहीं है।'

उनके इस कथन पर मुझे संदेह हुआ, क्योंकि अपनी पी.एच.डी. के संदर्भ में जायसी कृत 'पदमावत' में अल्लादीन से युद्ध के दौरान जिन जातियों का नाम आया है, उसमें अग्रवाल जाति का भी नाम आया है। पद्मावत 13वीं सदी की रचना है। अतः यह तो निश्चय हो गया कि अग्रवाल शब्द 13वीं सदी में था। अतः यह शोध करना शेष था कि वैश्य वर्ण के एक समूह के साथ 'अग्रवाल' शब्द कब से जुड़ा क्यों कर जुड़ा।

जबलपुर विश्वविद्यालय में मेरा आना-जाना बहुत था। उस समय के पाली प्राकृत विभाग के विभागाध्यक्ष ने मुझे बताया कि 'जैन प्रशस्ति ग्रंथ संग्रह में आपको 'अग्रवाल' शब्द मिल जाएगा। वे जैन थे (उनका नाम विमल प्रकाश जैन है वे आजकल अमरीका में हैं) 'जैन प्रशस्ति ग्रंथ संग्रह' पढ़ने पर मुझे ग्यारहवीं सदी तक में 'अग्रवाल' 'अग्रवाल', 'अइरवाल' आदि शब्दों का वर्णन 'अग्रोत कान्वय वणिक' जाति के साथ जुड़ा हुआ मिल गया। मैंने डॉ. परमेश्वरीलाल गुप्त को सूचना दी कि अयरवाल, अइरवाल, अगरवाल शब्द ग्यारहवीं सदी तक में कवियों के नामों के साथ वर्णन आया है। उन्होंने उत्तर दिया कि किसी भाषाविद से निर्णय करवाइए कि क्या 'अयरवाल', 'अइरवाल', अग्रवाल शब्द में परिवर्तित हो सकता है?

मैं फिर जबलपुर विश्वविद्यालय गई। वहां भाषा विज्ञान के प्रो. डॉ. महावीरशरण जैन को मैंने अपनी समस्या बताई। उन्होंने मुझे लिखकर प्रमाणित किया कि पंजाब प्रांत में भाषा के उतार-चढ़ाव के विकासीय स्तर पर अयरवाल, अइरवाल शब्द अग्रवाल कैसे बना। इनका विशद विवेचन मैंने अग्रसेन अग्रोहा, अग्रवाल पुस्तक के दूसरे संस्करण में किया है।

मानते हैं। असम में त्रिपुरा की राजधानी 'अगरतला' भी अग्रवालों से संबंधित नगरी मानी जाती है।

इस विषय में डॉ. परमेश्वरी लाल गुप्त का मत है कि इन सभी स्थानों के नाम 'अगर' इसलिए पड़े चूंकि वहां जाकर एक जाति विशेष के लोग रहने लगे, न कि उस नगर के नाम से 'अगरवाल' जाति का नाम पड़ा। लगभग 150 ई.पू. मालव लोग पंजाब छोड राजपूताना की ओर चले तो उनके साथ 'आग्रेयगण' के भी कुछ लोग आए। वे भी यहां आकर बस गए और अपने गांव का नाम 'अगर' रख लिया।

यदि सौराष्ट्र और मालवा के 'आगर' को अग्रवालों का केन्द्र स्थान माना जाए तो प्रश्न उठता है कि केन्द्र स्थान से दूर प्रजाति का एक बहुत बड़ा भाग सैकड़ों मील उत्तर में जाकर क्यों बसा? अतः यही तर्क संगत प्रतीत होता है कि यह जाति उत्तर की ओर से ही व्यापार व्यवसाय या अन्य संबंधों, युद्धों, विपदाओं के कारण दक्षिण की ओर बढ़ी। इस प्रकार अग्रोहा से निकलने वाले पहले अग्रोहा के समीपवर्ती क्षेत्रों में फैलें, तत्पश्चात कुछ परिवार व्यापारिक भागों द्वारा अन्य स्थानों पर गए। जिन स्थानों में उन्होंने अपना केन्द्र बनाया, उस केन्द्र स्थान का नाम अपने मूल स्थान के नाम पर दिया।

निष्कर्ष रूप में कुछ सूत्र 'अग्रवाल' शब्द से जुड़े।

'अग्रवाल', 'अग्रेयगण' के निवासी कहलाए। उनका मूल स्थान 'अग्रोहा' है जो आज भी हरियाणा प्रदेश के एक बड़े खेड़े के रूप में विद्यमान हैं।

आगरा, आगर, अगलपुर, अगरतला आदि नगरों के नाम अग्रोहा निवासी वणिकों के द्वारा ही रखे गए। अपने मूल स्थान की स्मृति में वे जहां-जहां गए अपने पूर्वजों के नाम और पूर्वजों की धरती की स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रहे।

ग्यारहवीं सदी के बाद ही 'अग्रोहा' नगर पूर्णतः विध्वंस हुआ, अतः तब से यहां के निवासी सुदूर प्रांतों मे जाकर बसे। 'अग्रोहावाले' कहे जाते थे बिगड़ते-बिगड़ते उच्चारण भेद से ये अग्रोहावाले से 'अग्रवाल' शब्द बना जो कालांतर में उन सभी वणिकों की जाति विशेष की संज्ञा बन गई जो 18 गोत्रधारी थे, अग्रोहा से निकले थे। यही कारण है कि 11वीं सदी से पूर्व 'अग्रवाल' शब्द का उल्लेख नहीं मिलता।

यही है 'अग्रवाल' शब्द की व्युत्पत्ति, उसका विकास और उसका संक्षिप्त इतिहास।

अग्रवालों की कुलदेवी महालक्ष्मी जी के आशीर्वाद एवं महाराजा अग्रसेन जी के सिद्धांतों से प्रेरित होकर अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन ने 'श्री अग्रसेन फाउंडेशन' की स्थापना की है। फाउंडेशन के माध्यम से समाज में जरूरतमंदों को शिक्षा, स्वास्थ्य एवं रोजगार उपलब्ध कराने के साथ-साथ अग्रवालों की आदि जन्मभूमि तथा महाराजा अग्रसेन जी की कर्मभूमि अग्रोहा में दस एकड़ भूमि पर 'अग्र विभूति स्मारक' बनाया जा रहा है।

अग्र विभूति स्मारक में प्रस्तावित योजनाएं

इस स्मारक के प्रथम चरण में 17 भवन (बिल्डिंग) बनेंगे, जो निम्न प्रकार से होंगे :

(क) इसमें एक 10 मंजिला भवन बनाया जाएगा। जिसका क्षेत्रफल 110000 वर्ग फुट होगा। इस भवन की विशेषताएं निम्न प्रकार से होंगी :

(1) इसमें सभी राज्यों का संग्रहालय स्टेट मेमोरियल बनेगा।

(2) इसमें एक प्रशासनिक विभाग बनेगा।

(3) एक लाइब्रेरी विकसित की जाएगी।

(4) एक सम्मेलन कक्ष का निर्माण किया जाएगा।

(5) एक खेल परिसर का निर्माण किया जाएगा।

(6) एक अनुसंधान (रिसर्च) केन्द्र बनेगा।

(ख) अन्य 14 भवन जो कि तीन से पांच मंजिला होंगे का उपयोग, आवासीय एवं अन्य बहुउपयोगीक्षेत्र के रूप में किया जाएगा।

(ग) स्मारक के केन्द्र में एक हरित उद्यान का निर्माण किया जाएगा, जिसमें लगभग, 1,00,000 लोगों की विशाल जनसभा के आयोजन की व्यवस्था होगी।

(घ) एक कृत्रिम झील का निर्माण भी किया जाएगा, जिसमें नौका पर्यटन की सुविधा उपलब्ध होगी।

(ड़) देश की आजादी से लेकर अब तक देश निर्माण में योगदान देने वाली अग्र वैश्य विभूतियां जिन्होंने समाज का नाम रोशन किया हो जैसे महान स्वतंत्रता सेनानी, उद्योगपति, राजनेतागण, डॉक्टर, इंजीनियर, साहित्यकार, खिलाड़ी व अन्य क्षेत्रों में योगदान देने वालों की प्रतिमा व जीवन परिचय भी स्मारक में लगाया जाएगा।

उपरोक्त योजनाओं को मूर्तरूप देने के लिए समाज बुंधओं का तन-मन व धन से सहयोग अत्यंत आवश्यक है। आप इसमें अपनी क्षमता के अनुसार 11 लाख रूपये देकर संरक्षक ट्रस्टी, 5 लाख रुपये देकर विशिष्ट ट्रस्टी या 1 लाख रुपये का सहयोग देकर ट्रस्टी बन सकते हैं।

इसके अतिरिक्त परिवार के प्रत्येक सदस्य के नाम से इस स्मारक के लिए सवा गज भूमि का दान मात्र 500/- रुपये अवश्य दें। स्मारक के निर्माण में 21,000/- रुपये या इससे अधिक दान देने वाले दानी सज्जन का नाम स्मारक में अंकित किया जायेगा। उपरोक्त प्रस्तावित योजनाओं में भी आप स्वयं, अपने परिवार, अपने संस्थान या प्रियजनों की याद में सहयोग देकर उस स्थान पर नाम अंकित करवा सकते हैं।

प्रदीप मित्तल
अध्यक्ष

बालकिशन अग्रवाल
महामंत्री

फाउंडेशन को दी गई राशि आयकर अधिनियम 80जी के अंतर्गत छूट प्राप्त है।

लेखिका का संक्षिप्त परिचय

डॉ. स्वराज्यमणि अग्रवाल

जन्म	:	8 जनवरी 1931 (प्रयाग)
पति का नाम	:	श्री बद्रीप्रसाद अग्रवाल, एम.ए., बी.काम एल.एल.बी., साहित्यरत्न
शिक्षा	:	एम.ए. हिन्दी स्वर्ण पदक प्राप्त, एम.ए., संगीत (कोविद) पी.एच.डी. 1968

सेवा सदस्यता :

1953 से लेकर 1985 तक विभिन्न सम्मानीय पदों पर बेशुमार मान सम्मान, शील्ड, प्रमाण पत्र सोने चांदी के पदक प्राप्त किए। अखिल भारतीय अग्रवाल सम्मेलन तथा अग्रोहा विकास ट्रस्ट में निरंतर छह वर्षों तक वरिष्ठ उपाध्यक्ष का कार्य संभाला। जबलपुर में 1954-55 में स्थानीय अग्रवाल महिला संगठन की स्थापना की। जबलपुर अग्रवाल सभा तथा मध्यप्रदेश अग्रवाल महासभा के संस्थापक अध्यक्ष (श्री बद्रीप्रसाद अग्रवाल) अपने पति के साथ बिना किसी पद के कार्य करती रही। सन् 1978 में अग्रसेन, अग्रोहा, अग्रवाल जाति का इतिहास नामक शोधग्रंथ लिखा। 1995 में प्रथम राष्ट्रीय रामप्रसाद पोद्दार पुरस्कार से आपको सुशोभित किया गया। अ.भा. अग्रवाल सम्मेलन ने ताम्र पत्र तथा कोलकाता अग्रवाल सेवा समाज के रजत जयंती के अवसर पर आपको अग्र विद्या रत्न की उपाधि से सम्मानित किया गया।

लेखन :

मध्यप्रदेश अग्रवाल महासभा की मासिक पत्रिका 'अग्रवाल दर्पण' का पांच वर्षों तक लगातार अपने पति के साथ मिलकर संपादन किया। एक उपन्यास लिखा जिस का नाम है 'मानिनी'। कविता, कहानी, समसामयिक, आध्यात्मिक, साहित्यिक विषयों के अतिरिक्त देश की ज्वलंत समस्याओं पर अनेक लेख लिखे। योग पर तीन अंग्रेजी पुस्तकों का अनुवाद किया, जिसका प्रकाशन स्वामी शिवानंद योग विद्यालय मुंगेर द्वारा किया गया। The essence of Tripitak अंग्रेजी पुस्तक का अनुवाद किया। विपश्रना गुरु श्री सत्यनारायण गोयनका के आग्रह पर संक्षित बुद्ध चरित्र लिखकर उन्हें समर्पित किया।

अन्य विशेषताएं :

प्रारंभ से ही श्रेष्ठ वक्ता एवं मधुर गायिका के रूप में ख्याति अर्जित की। अ.भा. अग्रवाल सम्मेलन के मंच से राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने उनके छोटे से आभार प्रदर्शन की भूरि-भूरि प्रशंसा की। तमिलनाडु के गवर्नर श्री सुखाड़िया जी ने उनके पांच मिनट के भाषण से प्रभावित हो उन्हें गवर्नर हाउस में आमंत्रित कर सम्मानित किया। अग्रोहा विकास ट्रस्ट द्वारा संचालित रथयात्रा में सर्वाधिक समय तक अग्रसेन रथ यात्रा का नेतृत्व, कवि सम्मेलनों एवं अनेक साहित्यिक गोष्ठियों, सर्वधर्म सम्मेलनों जैसे मंचों की अध्यक्षता की।

उपसंहार :

मृदुभाषी निरहंकारी, नम्र, करूणामयी, दानी, परोपकारी, सांस्कृतिक सद्गुणी समर्पित महिला के रूप में प्रतिष्ठित। पिछले दो वर्षों से स्वेच्छा से सम्पूर्ण पदों का त्याग कर गीताधाम में वानप्रस्थी जीवन व्यतीत करते हुए साधनारत हैं।

सम्पर्क सूत्रः- जीवन कॉलोनी, बलदेव बाग, जबलपुर (म.प्र.) फोन : 0761-5018664